THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY

OU_176624

UNIVERSAL LIBRARY

OUP—901—26-3-70—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H.891.432 Accession No. H.1024
T h 36 M

Author ठाकुर रवीन्द्रनाथ

Title मुक्त-धारा

This book should be returned on or before the date last marked below.

प्रकाश-पुस्तक-माला की ३० वीं पुस्तक

मुक्तधारा

(नाटक)

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अनुवादक—
श्री रमाचरण.

शिवनारायण मिश्र वैद्य द्वारा
प्रकाश-पुस्तकालय, कानपुर से
प्रकाशित तथा सुरेन्द्र शर्मा
द्वारा प्रताप प्रेस कानपुर में मुद्रित.
प्रथम संस्करण २००० ज० १[illegible]५

दो शब्द

विश्व-कवि रवीन्द्र की कृति का परिचय क्या ! मानव-जीवन के सम्बन्ध में 'स्वतंत्रता' शब्द से जो भावाभिव्यक्ति होती है 'मुक्तधारा' नाम में पाठक उसी भावभिव्यक्ति के दर्शन करेंगे। प्रधानपात्र युवराज अभिजित ने जब सुना कि मैं मुक्तधारा के पास पड़ा हुआ पाया गया था तो उसने अपने में और मुक्तधारा में आत्मिक सम्बंध का अनुभव किया। उसने देखा कि मुक्तधारा ने अपने शब्द से जगत में सबसे पहले उसका अभिनन्दन किया था और मानव-आत्मोन्नति के मार्ग को उन्मुक्त करने का सन्देश दिया था; उसने मुक्तधारा को अपने अन्तरिक जीवन का तद्रूप चित्र समझा। यन्त्र द्वारा 'मुक्तधारा' को अवरोध करने की नीरव ललकार पर वह मञ्जुल भावनाओं को नमस्कार करके, मोहपाश को छिन्न भिन्न करके, निकल पड़ा और मुक्तधारा के बन्धन को तोड़ कर त्याग का चित्र अंकित कर गया।

"इस नाटक के पात्र धनञ्जय और उसके कथनोपकथन का अनेक अंश स्वरचित 'प्रायश्चित्त' नामक नाटक से लिया गया है जो अब से १८ वर्ष पहिले लिखा गया था"——ग्रन्थकार के ये शब्द ग्रन्थकार के व्यक्तित्व को समझने में पाठकों की सहायता करेंगे।

प्रकाशक.

हम दीनबन्धु श्री० एण्ड्रूज महोदय के हृदय से कृतज्ञ हैं जिन की कृपा से "मुक्तधारा" को हिन्दी पाठकों के सामने रख सकने की अनुमति प्राप्त हो सकी।

मुक्तधारा

[उत्तरकूट नाम का पहाड़ी प्रदेश है, इसी प्रदेश से होकर उत्तर-भैरव-मन्दिर जाने के लिए मार्ग चला गया है, सामने बहुत दूर पर, एक ओर एक अभ्रभेदी लौह यंत्र का शीर्षभाग दिखाई दे रहा है और दूसरी ओर भैरव-मन्दिर के शिखर का त्रिशूल। मार्ग के किनारे एक आम के बाग में राजा रणजित का शिविर है। आज अमावस्या के दिन भैरव-मन्दिर में बड़े साज से आरती करने का आयोजन किया जा रहा है। वहाँ राजा आज पैदल जायँगे; इस समय, शिविर में विश्राम कर रहे हैं। उनकी सभा के प्रधान शिल्पी ने बहुत वर्षों के परिश्रम से लोहे का यन्त्र बना कर 'मुक्तधारा' नामक झरने को बाँधा है। इस असामान्य कीर्ति को पुरस्कृत करने के लिए उत्तरकूट की समस्त जनता भैरव-मन्दिर पर उत्सव मनाने जा रही है। भैरव-मन्त्र से दीक्षित संन्यासियों का दल सारा दिन स्तुति-गान करता हुआ प्रदक्षिणा कर रहा है। इनमें से किसी के हाथ में धूप का पात्र है जिसमें धूप जल रहा है; किसी के हाथ में शंख है और किसी के हाथ में घण्टा। गान के बीच बीच में ताल के साथ घण्टा बज उठता है।]

गान

जय भैरव, जय शंकर,
जय जय जय प्रलयंकर,
शंकर, शंकर!
जय संशय-भेदन,
जय बन्धन-छेदन,
जय सङ्कट-संहर,
शंकर, शंकर!

[भैरवपंथी-दल का गाते गाते प्रस्थान। नैवेद्य लिए हुए एक विदेशी यात्री का प्रवेश। उत्तरकूट के एक नागरिक से उसने पूछा,—

वह दूर—बड़ी दूर—वह, क्या देख पड़ रहा है ? देखकर डर लगता है।

नागरिक

नहीं जानते ? विदेशी हो, जान पड़ता है ! वह यन्त्र है।

यात्री

यंत्र, कैसा यंत्र ?

नागरिक

पचीस वर्ष से हमारा प्रधान शिल्पी विभूति जिस यंत्र को बना रहा था, यही तो वह यंत्र है; अब बन कर तैयार हुआ है। आज इसी का उत्सव है।

यात्री

यंत्र क्यों बनाया गया है ?

नागरिक

इसी यंत्र से झरने को बाँधा है।

यात्री

बाप रे ! यह तो मानो किसी राक्षस का सिर है। बिना माँस-चाम के लटका हुआ जबड़ा कैसा दिखाई दे रहा है ! तुम्हारे उत्तरकूट के सिर पर यह ऐसा भयानक रूप धरे खड़ा है कि रातदिन इसे देख देख कर तुम लोगों के प्राण ही सूख जायँगे।

नागरिक

हम लोगों के प्राणों की चिन्ता न करो, हमारे प्राण ऐसे कोमल नहीं हैं।

यात्री

हो सकता है, किन्तु सूर्य के सामने, यह इस प्रकार खुला रखने की वस्तु नहीं, इसे तो ढक रखना ही अच्छा होगा। देखते नहीं, किस प्रकार रातदिन आकाश-मण्डल को क्रोध से क्षुब्ध किये रहता है ?

नागरिक

तुम क्या भैरव की आरती देखने न चलोगे ?

यात्री

आरती देखने का विचार करके ही तो घर से निकला था। प्रति वर्ष इस अवसर पर आता रहा हूँ और सदा मन्दिर के संलग्न आकाश को निर्वाध देखता रहा हूँ, पर आज अकस्मात इस पर आँखें पड़ते ही सारी देह सिहर उठी। अपना सिर मन्दिर के शिखर से ऊँचा करके यह इस प्रकार दिखाई दे रहा है जैसे चुनौती दे रहा हो। जाता हूँ, नैवेद्य दिये आता हूँ, किन्तु मन में शान्ति नहीं आती।

[प्रस्थान

[एक स्त्री का प्रवेश. वह एक सफेद चादर ओढ़े हुए है, चादर का एक किनारा धूल में लिथड़ रहा है]

स्त्री

सुमन ! मेरे सुमन !! (नागरिक के प्रति) भइया, मेरा सुमन अभी तक नहीं लौटा। तुम लोग तो सब लौट आये !

नागरिक

तुम कौन हो ?

स्त्री

मैं जनाई गाँव की अम्बा हूँ। हाय, मेरी आँखों के प्रकाश, मेरे प्राणों के निश्वास—सुमन ! मेरे सुमन !!

नागरिक

तो क्या हुआ माँ उसे ?

अम्बा

जाने उसे कहाँ ले गये। मैं भैरव के मन्दिर में पूजा देने गई थी—लौट कर देखती हूँ, उसे ले गये।

नागरिक

तो जान पड़ता है उसे मुक्तधारा का बाँध बाँधने ले गये थे।

अम्बा

सुना है, इसी रास्ते ले गये हैं; इधर ही कहीं, इसी गौरी-शिखर के पश्चिम की ओर—मेरी दृष्टि वहाँ नहीं पहुँचती और आगे राह भी नहीं देख पड़ती। हाय, सुमन! मेरे सुमन!! (क्रन्दन)

नागरिक

रोओ मत माँ, रोने से क्या लाभ होगा? हम लोग भैरव की आरती देखने निकले हैं। आज हम लोगों का उत्सव-दिवस है, चलो तुम भी देख आओ।

अम्बा

नहीं बेटा, उस दिन भी तो भैरव की आरती ही देखने गई थी। अब तो वहाँ जाने डर लगता है। सुनो, मैं तुम से कहती हूँ, हम लोगों की पूजा भैरव बाबा को नहीं मिलती, बीच ही से कोई उड़ा लेता है।

नागरिक

कौन उड़ा लेता है?

अम्बा

वही, जो मेरी गोद से सुमन को उठा ले गया। वह कौन है?—अब तक भी न जान सकी। सुमन, बेटा सुमन!

[दोनों का प्रस्थान.

[उत्तरकूट के युवराज अभिजित ने यंत्रराज विभूति के पास दूत भेजा है. मंदिर जाते हुए विभूति से उस दूत की भेंट होती है.]

दूत

यन्त्रराज विभूति, युवराज ने मुझे आप के पास भेजा है।

विभूति

उनकी क्या आज्ञा है?

दूत

इतने दिनों से तुम हमारे मुक्तधारा झरने को बाँध बाँधकर रोक देने की चेष्टा कर रहे थे। वह बार बार टूटा, कितने लोग बालू-पत्थर के नीचे दब मरे, कितने लोग बाढ़ में बह गये। आज अन्त में—

विभूति

उनका प्राण देना व्यर्थ नहीं हुआ। हमारा बाँध तैयार हो गया।

दूत

शिवतराई की प्रजा ने बाँध बन जाने की खबर अभी तक नहीं पाई। वे विश्वास ही नहीं कर सकते कि जो जल देवता ने उन्हें दिया है उसे कोई मनुष्य बाँध सकता है।

विभूति

देवता ने उन्हें केवल जल ही दिया है किन्तु हमें दिया है उस जल को बाँधने का बल।

दूत

वे लोग निश्चिन्त हैं, नहीं जानते कि इस सप्ताह के बीतते ही उनके खेत—

विभूति

उनके खेत, क्या कहते हो?

दूत

बाँध बाँधकर उनके खेतों को सुखा डालना ही क्या तुम्हारा उद्देश्य न था?

विभूति

बालू, पत्थर और जल—इन तीनों के षड्यंत्र को नष्ट

करके मनुष्य की बुद्धि विजयी हो—यह हमारा उद्देश्य था। किस किसान का, कौनसा भुट्टे का खेत बरबाद हो जायगा, यह सोचने का हमें अवसर न था।

दूत

युवराज ने पूछा है, कि यह सोचने का अवसर क्या अब भी नहीं है?

विभूति

नहीं, मैं तो यंत्र-शक्ति की महिमा की बात सोच रहा हूँ।

दूत

क्षुधित का क्रन्दन क्या तुम्हारी इस भावना को भङ्ग न कर सकेगा?

विभूति

नहीं। जल के वेग से हमारा बाँध नहीं टूटता, क्रंदन के बल से हमारा यंत्र नहीं टलता।

दूत

तुम्हें अभिशाप का भय नहीं है?

विभूति

अभिशाप! देखो, जब उत्तरकूट में मजूर न मिल सके तो राजा की आज्ञा से 'चण्डपत्तन' के प्रत्येक घर से १८ वर्ष के ऊपरवाले युवकों को हम लोग पकड़ लाये थे। उनमें से अनेकों न लौट पाये। सोचो, वहां की कितनी माताओं के अभिशाप पर हमारा यंत्र विजयी हुआ है! दैवीशक्ति के साथ जिसकी लड़ाई हो वह मनुष्य के अभिशाप की क्या परवाह कर सकता है?

दूत।

युवराज ने कहा है कि इतनी बड़ी कीर्ति का गौरव तो

प्राप्त हो चुका, अब निज कीर्त्ति को भंग करने का गौरव, जो उससे भी बड़ा गौरव है, स्वयं प्राप्त करो।

विभूति

मेरी यह कीर्ति जब तक तयार नहीं हुई थी तब तक मेरी थी; किन्तु अब, अब यह मेरी नहीं, उत्तरकूट के जन-साधारण की है, इस लिये भंग करने का मुझे अब अधिकार नहीं रहा।

दूत

तब युवराज का कहना है कि भंग करने का अधिकार वे स्वयं ग्रहण करेंगे।

विभूति

स्वयं उत्तरकूट के युवराज ने ऐसी बात कही? क्या वे हम लोगों के नहीं हैं? क्या वे केवल शिवतराईवालों ही के हैं?

दूत

उन्होंने कहा है, उत्तरकूट में केवल यंत्र का ही प्रभुत्व नहीं है, वहां देवता भी है यह प्रमाणित करना चाहिए।

विभूति

यंत्र के बल से देवता का पद मैं स्वयं लूँगा—इस बात को प्रमाणित करने का भार मेरे ऊपर है। युवराज से कह दो, इस बाँध-यंत्र की एक मूठ भी अलग नहीं की जा सकती, मैंने इसे ऐसा बनाया ही नहीं।

दूत

नाश के देवता सदा बड़े मार्गों से ही नहीं चला करते। उनके लिये जो छिद्र--मार्ग होते हैं वे किसी की दृष्टि में भी नहीं आते।

विभूति

(चकित होकर)—छिद्र ? सो क्या ? छेद की बात तुम क्या जानो ?

दूत

मैं क्या जानूँ ! जिन्हें जानना चाहिये, वे जान लेंगे ।

[दूत का प्रस्थान

[उत्तरकूट के नागरिक उत्सव मनाने मंदिर को जा रहे हैं। विभूति को देखकर-

१

वाह यंत्रराज ! तुम तो बड़े अद्भुत जीव हो। कब चुपके से आगे निकल आये; हम लोगों को रत्ती भर भी पता न लगा !

२

यह इसकी पुरानी टेव है। यह कब, चुपके चुपके सबको छोड़कर आगे बढ़ जाता है, पता नहीं चलता। यही न हमारे चबुआ गाँव का वह मुड़-मुण्डा विभूति है, हम लोगों के साथ, जिसकी गुरु जी कान-मलाई किया करते थे। यह आज हम सब को छोड़, न जाने किस तरह इतना बड़ा काण्ड कर बैठा।

३

अरे गवरू, टोकरी लिये भौचक्का सा क्या खड़ा है ? विभूति को और कभी नहीं देखा है क्या ? फूलमाला निकाल, पहना दें।

विभूति

बस, बस, रहने दो।

३

क्यों, रहने दो क्यों ? जैसे तुम हठात् इतने बड़े होगये हो वैसे ही यदि हठात् तुम्हारा गला कहीं ऊँट के गले के समान बड़ा हो जाता और उत्तरकूट के सब लोग मिलकर तुम्हारे उस गले को मालाओं से लाद देते तो अच्छा होता।

२

भाई, ढोलवाला तो अभी तक नहीं आया ?

१

बिलकुल काहिलों का सरदार है, उस की पीठ पर ढोल के डण्डे लगते तो—

३

क्या बेतुकी बात कह रहे हो, डण्डे लगाने में तो हमारे हाथों से उसके हाथ अधिक मजबूत हैं।

४

मन में सोचा था कि विशाई सामन्त के यहाँ से रथ लाकर विभूति भाई की सवारी निकलवाऊँगा। किन्तु आज तो राजा भी मन्दिर पैदल ही जायंगे!

५

अच्छा हो हुआ। सामान्त का रथ तो एकदम दशरथ है! राह में, बात को बात में एक का दस हो जाता!

३

हः हः हः! दशरथ! हमारा लम्बू खोद-खोद कर कैसी बातें निकालता है! दशरथ!

५

योंही थोड़े कह रहा हूँ, बड़ी साध से बेटे के ब्याह में रथ मँगनी ले गया था। पर जितना उस पर चढ़ने को मिला, उससे कहीं अधिक उसे खींचना पड़ा।

४

अच्छा, एक बात करें, विभूति को कंधों पर बिठाकर ले चलें।

विभूति

अरे, यह क्या करते हो!

५

कुछ नहीं, यही तो चाहिये। उत्तरकूट की गोद में तुम्हारा जन्म हुआ है, किन्तु आज तुम उसके सर पर हो। तुम्हारा मस्तक सब से ऊपर है।

[कंधों पर लाठी सजा कर, उस पर विभूति को बिठा लिया]

सब

जय यंत्रराज विभूति को जय।

गान।

नमो यंत्र, नमो यंत्र, नमो यंत्र, नमो यंत्र !
तुम चक्रमुखरमंद्रित,
तुम वज्रवह्निवन्दित,
तव वस्तुविश्व वक्ष-दंश,
ध्वंस-विकट दंत !
तव दीप्त अग्नि शत शतघ्नी,
विघ्न-विजय पन्थ।
तव लौहगलन शैलदलन
अचल-चलन मंत्र।
कभी काष्ठ लोष्ट्र इष्टक दृढ़
घनपिनद्ध काया,
कभी भूतल-जल-अन्तरीक्ष,
लंघन लघुमाया,
तव खनि-खनित्र-नख-विदीर्ण,
क्षिति विकीर्ण-अंत्र
तव पञ्चभूत-बंधनकर
इंद्रजाल तंत्र।

[विभूति को लेकर सब चले गये।

[उत्तरकूट के राजा रणजित और उनके मंत्री का शिविर की ओर से आगमन]

रणजित

शिवतराई की प्रजा को तुम किसी प्रकार वश में न ला सके। इतने दिन पीछे विभूति ने मुक्तधारा के जल को बाँध-

कर, उनसे, शासन को पूर्ण रूप से मनवाने का उपाय कर दिया। किंतु मंत्री, हम तुम में तो वैसा उत्साह नहीं पाते। ईर्षा ?

मंत्री

क्षमा करें महाराज, खन्ता कुदाल लेकर मिट्टी-पत्थर के साथ पहलवानी करना हम लोगों का काम नहीं है। राष्ट्रनीति हमारा शस्त्र है और मनुष्यों के मनों को लेकर हमारा कारबार। युवराज को शिवतराई का शासन-भार देने की मंत्रणा मैंने ही दी थी, उससे जो बाँध बाँधा जा सकता वह इससे कम न होता।

रणजित

उससे क्या लाभ हुआ ? दो वर्ष का भूमिकर बाकी है। इस प्रकार के दुर्भिक्ष तो वहाँ बराबर पड़ते ही रहते हैं, इस बात से राजा का प्राप्य-कर बंद नहीं हो जाता।

मंत्री

ऐसे समय में, जब कर से कहीं अधिक मूल्यवान वस्तु मिल रही थी, आपने युवराज को लौट आने का आदेश दे दिया। राजकार्य्य में छोटे लोगों की अवहेलना उचित नहीं होती। यह न भूलें महाराज, कि असह्य हो उठने पर दुख के बल से छोटे लोग बड़ों को छोड़कर बड़े हो जाते हैं।

रणजित

तुम्हारी मंत्रणा का सुर क्षण क्षण में बदला करता है। कितनी बार तुमने कहा है कि ऊपर चढ़ बैठने पर नीचे दाब रखना सहज है। और विदेशी प्रजा पर इस प्रकार की दाब ही राजनीति है, क्यों, नहीं कहा ?

मंत्री

कहा था। उस समय दूसरी अवस्था थी, तदनुकूल मेरी मंत्रणा हुई थी। किन्तु अब—

रणजित

युवराज को शिवतराई भेजने की इच्छा मुझे बिलकुल न थी।

मंत्री

क्यों महाराज ?

रणजित

जो दूर की प्रजा है उसके समीप जाकर, उससे अधिक मेल-जोल बढ़ाने से उसका भय छूट जाता है। प्रीति से अपने लोगों को वश में किया जाता है, दूसरों को वश में रखने के लिए भय को जाग्रत रखना आवश्यक होता है।

मंत्री

महाराज, युवराज को शिवतराई भेजने का मूल कारण आप भूल रहे हैं। कुछ दिनों से उनका मन बड़ा उचाट सा हो गया था। हम लोगों को संदेह हुआ कि जान पड़ता है, उन्हें किसी सूत्र से पता चल गया है कि उनका जन्म राज-परिवार में नहीं हुआ, वे मुक्तधारा झरना के नीचे पड़े पाये गये थे। इसीलिए उनको भुलाये रखने के लिए—

रणजित

सो तो जानता हूँ—वह इधर कुछ दिनों से, रात में अकेला जाकर झरने के नीचे सो रहता था। खबर पाकर एक दिन रात में मैं वहाँ गया, मैंने उससे पूछा,—"क्या बात है अभि-जित, यहाँ कैसे ?" उसने उत्तर दिया, "इस जल के कल-रव में मैं अपनी मातृभाषा सुन रहा हूँ।"

मंत्री

मैंने उनसे पूछा था, "युवराज, तुम्हें क्या हो गया है ? आजकल राजमहल में प्रायः तुम्हें क्यों नहीं देख पाता ?"

उन्होंने कहा—"मैं पृथ्वी पर मार्ग उन्मुक्त करने के लिए आया हूँ—यह संदेश मुझे मिल गया है।"

रणजित

इस लड़के में चक्रवर्ती राजा के लक्षण हैं, हमारा यह विश्वास शिथिल होता जा रहा है।

मंत्री

इस दैवी लक्षण की बात तो महाराज के गुरु के गुरु स्वयं श्री अभिराम स्वामी ने कही थी।

रणजित

उन्होंने भूल की। उसको लेकर मुझे केवल हानि ही हो रही है। शिवतराई प्रदेश का ऊन विदेशी बाजारों में जाने से रोकने के लिए पितामह के शासनकाल में नंदि-सङ्कट का पथ बंद कर दिया गया था, तब से वह पथ बराबर बंद चला आ रहा है, किंतु, अब उसी पथ को अभिजित ने खोल दिया। इससे उत्तरकूट में अवश्य अन्न-वस्त्र की महँगी हो जायगी।

मंत्री

अभी वे बालक हैं, युवराज केवल शिवतराई के विचार से ही—

रणजित

किंतु, यह तो अपने लोगों से विद्रोह करना है। शिवतराई के उस धनञ्जय वैरागी का भी इस में हाथ अवश्य है जो प्रजा को भड़काता फिरता । इस बार कण्ठी समेत उसके कण्ठ को कसकर पकड़ना होगा। उसको बंदी करना चाहिए।

मंत्री

महाराज का इच्छा का प्रतिवाद करने का मैं साहस नहीं करता, किंतु महाराज जानते ही होंगे कि इस समय ऐसे

दुर्योग आ पड़े हैं कि उसको रोक रखने की अपेक्षा छोड़ रखना ही निरापद है।

रणजित

अच्छा, इसके लिए तुम चिंता न करो।

मंत्री

मैं चिंता नहीं करता, महाराज से ही विचार करने को कहता हूँ।

[प्रतिहारी का प्रवेश]

प्रतिहारी

मोहनगढ़ के महाराज काका विश्वजित आ रहे हैं।

[प्रस्थान]

रणजित

यह भी एक हैं। अभिजित को बिगाड़नेवालों में अग्र-गण्य हैं। अपना हो कर भी जो पराया हो, वह कुबड़े के कूबड़ के समान है जो सदा लगा ही रहता है, काट कर फेंका भी नहीं फेंक जाता और सुख से जिसका भार भी नहीं उठाया जाता।—यह शोर कैसा ?

मंत्री

भैरवपंथी-दल मंदिर की प्रदक्षिणा के लिए निकला है।

[भैरव-पंथियों का प्रवेश और गान—

तिमिर-हृद्विदारण
ज्वलदग्नि-निदारुण,
मरुश्मशान-सञ्चार,
शंकर, शंकर।
वज्रघोष-वाणी,
रुद्र, शूल-पाणि,

मृत्यु-सिंधु-संतर।
शंकर, शंकर।

[प्रस्थान।

[रणजित के पितृव्य मोहनगढ़ के राजा विश्वजित का प्रवेश। उनके केश, पगड़ी, वस्त्र आदि सब श्वेत हैं।]

रणजित

प्रणाम काका जी! आप आज उत्तर-भैरव के मंदिर की पूजा में योग देंगे, इस सौभाग्य की आशा न थी।

विश्वजित

मैं तुम्हें यह सूचना देने आया हूँ कि उत्तरभैरव आज की पूजा ग्रहण न करेंगे।

रणजित

आपके ये दुर्वाक्य आज हमलोगों के इस महोत्सव को—

विश्वजित

महोत्सव—किस बात का महोत्सव? विश्व के तृषित जीव मात्र के लिये देवाधिदेव ने अपने कमण्डलु से जो जल-धारा प्रवाहित की है उस मुक्त जलधारा को तुम लोगों ने क्यों रोक दिया?

रणजित

शत्रुदमन के लिये।

विश्वजित

महादेव को शत्रु बनाते हुए भय नहीं हुआ?

रणजित

हमारी जय से उत्तरकूट के पुरदेवता की जय है। इसी लिये हमलोगों का पक्ष लेकर उन्होंने अपना दिया हुआ दान उनसे लौटा लिया। पिपासा के शूल से बेध कर वे शिवतराई को उत्तरकूट-सिंहासन के चरणों में ला खड़ा करेंगे।

विश्वजित

तब तुम लोगों की पूजा, पूजा नहीं वेतन है।

रणजित

काका जी, आप पराये के पक्षपाती और अपनों के विरोधी हैं। आप की ही शिक्षा से अभिजित अपने राज को अपना नहीं समझ रहा है।

विश्वजित

मेरी शिक्षा से ? एक दिन मैं भी तुम्हारे ही दल में था न ? चण्डपत्तन में जिस समय तुम्हारे कारण विद्रोह हुआ था, उस समय वहां की प्रजा का सर्वनाश करके क्या मैंने उस विद्रोह को शान्त नहीं किया था ? अनंतर, अचानक इस बालक अभिजित ने मेरे हृदय में प्रवेश किया—उज्ज्वल प्रकाश के समान प्रवेश किया। अंधकार में, न पहचान सकने के कारण जिन पर प्रहार किया था उस समय उन्हें पहचान सका कि वे अपने हैं। चक्रवर्ती राजा के लक्षण देख कर जिसे तुमने अपनाया है उसे उत्तरकूट के क्षुद्र सिंहासन के घेरे में ही बंद रखना चाहते हो क्या ?

रणजित

जान पड़ता है, आपने ही अभिजित पर यह भेद खोला है कि वह मुक्तधारा के नीचे पड़ा हुआ पाया गया था ?

विश्वजित

हाँ, मैंने ही। उस दिन मेरे यहां उसे दीपावली का निमंत्रण था। गोधूलि के समय देखा कि वह अकेला बरामदे में खड़ा, गौरीशिखर की ओर ताक रहा है। मैं ने पूछा—"क्या देखते हो, बेटा ?" उसने कहा—"जो मार्ग अब तक नहीं खुले, इस दुर्गम पर्वत के ऊपर भविष्यकालीन उन्हीं मार्गों को देख रहा हूँ—जो दूर को निकट लानेवाले हैं।" सुनकर मन में हुआ

कि मुक्तधारा के झरने के पास जिसे किसी अज्ञात गृह-त्यागिनी माता ने जन्म दिया है, उसे भला कौन पकड़ कर रख सकता है ? अपने को न सँभाल सका, और बोला, "भाई, तुम्हारे जन्मकाल में गिरिराज ने पथ में तुम्हारी अभ्यर्थना की थी, शंख ने घर में तुम्हारी अभ्यर्थना नहीं की।

रणजित

अब समझा।

विश्वजित

क्या समझे ?

रणजित

यह कथा सुनकर ही उत्तरकूट के राजमन्दिर से अभिजित की ममता विच्छिन्न हो गई है। उसने स्पर्धापूर्वक यही दिखलाने के लिये नन्दिसंकट का मार्ग खोल दिया है।

विश्वजित

हानि क्या हुई ? जो मार्ग खुल जाता है वह सब के लिये—जैसे उत्तरकूट के लिये वैसे ही शिवतराई के लिये।

रणजित

काका जी, आप आत्मीय हैं, बड़े हैं, इसी से इतने समय तक मैंने धैर्य रखा। किन्तु अब नहीं रख सकता। आप स्वजन-विद्रोही हैं, अतएव आप राज्य छोड़ कर चले जायँ।

विश्वजित

मुझ से तो न छोड़ा जा सकेगा। हां, यदि तुम मुझे त्याग दो तो यह अङ्गीकार है।

[प्रस्थान।

[अम्बा का प्रवेश] (राजा से—

अजी, तुम लोग कौन हो? सूर्य्य तो अस्त होने चला—मेरा सुमन तो अब तक भी न लौटा!

रणजित

तू कौन है?

अम्बा

मैं कोई नहीं। जो मेरा सर्वस्व था उसे इसी मार्ग से ले गया। इस मार्ग का क्या अन्त नहीं है? क्या सुमन अब भी चल रहा है, अब भी चल रहा है? पश्चिम में गौरीशिखर को पार करके सूर्य डूब रहा है, प्रकाश डूब रहा है, सब कुछ डूब रहा है?

रणजित

मन्त्री, जान पड़ता है—

मन्त्री

हाँ महाराज, उसी बाँध के काम में—

रणजित

(अम्बा से) तू खेद मत कर। सुन, हमारी समझ में तो तेरे लड़के ने आज वह पुरस्कार पाया है जो इस पृथ्वी में सब से बढ़कर है।

अम्बा

यदि यह बात सच होती तो इस सन्ध्या समय वह पुरस्कार लाकर मेरे हाथ में रखता—मैं तो उसकी माँ हूँ।

रणजित

रखेगा। वह सन्ध्या अभी नहीं आई।

अम्बा

भइया, तुम्हारी बात सच हो। भैरवमन्दिर के मार्ग में मैं उसकी बाट जोहती रहूँगी। सुमन !

[प्रस्थान।

[पेड़ों के झुरमुट से छात्रों सहित उत्तरकूट के गुरु जी का प्रवेश]

गुरु

सुनते नहीं हो; मार खाओगे, जान पड़ता है। खूब गला फाड़कर बोलो, जय राजराजेश्वर।

छात्र

जय राजरा—

गुरु

(पास खड़े दो एक लड़कों को तमाँचे लगाकर) जेश्वर !

छात्र

जेश्वर !

गुरु

श्री श्री श्री श्री श्री—

छात्र

श्री श्री श्री—

गुरु (धक्का देकर)

पाँच बार।

छात्र

पाँच बार।

गुरु

अभागे बन्दरो ! बोलो, श्री श्री श्री श्री श्री—

छात्र

श्री श्री श्री श्री श्री—

गुरु

उत्तरकूटाधिपति की जय।

छात्र

उत्तरकूटा—

गुरु

धिपति

छात्र

धिपति

गुरु

की जय।

छात्र

की जय।

रणजित

तुम लोग कहाँ जा रहे हो ?

गुरु

हमारे यन्त्रराज विभूति को महाराज राजसम्मान देंगे, वहीं इन लड़कों को लेकर उत्सव मनाने जा रहा हूँ। ऐसे किसी अवसर को मैं हाथ से निकलने देना नहीं चाहता जिसमें ये सब लड़कपन से ही उत्तरकूट के गौरव में गौरव अनुभव करना सीखें।

रणजित

ये सब जानते हैं न, कि विभूति ने क्या किया है ?

लड़के

(कूद कर ताली बजा कर) जानते हैं, शिवतराईवालों के पीने का जल रोक दिया है।

रणजित

क्यों रोक दिया है ?

लड़के (उत्साह से)

उनको दण्ड देने के लिये।

रणजित

क्यों ?

लड़के

वे सब खराब आदमी हैं।

रणजित

खराब कैसे ?

लड़के

सभी जानते हैं, वे खराब हैं, बड़े खराब हैं।

रणजित

क्यों खराब हैं, यह नहीं जानते ?

गुरु

जानते क्यों नहीं, महाराज ! क्यों रे, तूने पढ़ा नहीं, पुस्तक में पढ़ा नहीं कि उनका धर्म बड़ा खराब—

लड़के

हाँ, हाँ, उनका धर्म बड़ा खराब है।

गुरु

और हम लोगों की सी उनकी—बोलो न (नाक बताकर)

लड़के

नाक ऊँची नहीं होती।

गुरु

अच्छा, हमारे गणिताचार्य ने क्या सिद्ध किया है—नाक ऊँची होने से क्या होता है ?

लड़के

खूब बड़ी जाति होती है।

गुरु

वे क्या करते हैं ? कहो न—पृथ्वी पर—बोलो,—वे सब पर विजयी होते हैं न ?

लड़के

हाँ, विजयी होते हैं।

गुरु

उत्तरकूट के लोग किसी युद्ध में कभी हारे भी हैं ?

लड़के

कभी नहीं।

गुरु

और हम लोगों के पितामह—महाराज प्रागजित ने केवल दो सौ तिरानवे सिपाही लेकर इकतिस हज़ार साढ़े सात सौ दक्षिणी बर्बरों को युद्ध में मार भगाया था न ?

लड़के

हाँ, हाँ, मार भगाया था।

गुरु

महाराज, निश्चय समझें कि उत्तरकूट के बाहर जो अभागे जन्म लेंगे, उन सबके लिये ये बालक एक दिन विभीषिका हो उठेंगे। यदि ऐसा न हो तो मेरा गुरु होना व्यर्थ है। हम लोगों पर कितना बड़ा दायित्व है, यह मैं एक क्षण भी नहीं भूलता। हमी लोग तो मनुष्य तैयार करते हैं और आपके मन्त्रीगण उनका उपयोग करते हैं। किन्तु वे क्या पाते हैं और हम लोगों को क्या मिलता है, महाराज तुलना करके इस पर विचार करें।

मन्त्री

तुम्हारे ये छात्रगण ही तो तुम्हारे पुरस्कार हैं।

गुरु

मन्त्री महोदय ने कैसी सुन्दर बात कही, छात्रगण ही तो हमारे पुरस्कार हैं! वाह!—किन्तु खाद्यसामग्री बड़ी महँगी है—देखें न, गव्यघृत जो था—

मन्त्री

अच्छा, तुम्हारे इस गव्यघृत की बात पर विचार करूँगा। इस समय जाओ, पूजा का समय निकट आ गया है।

[जयध्वनि करते हुए छात्रों को लेकर गुरु जी का प्रस्थान]

रणजित

तुम्हारे गुरु जी की झोपड़ी के भीतर और कोई घृत नहीं, केवल गव्यघृत ही जान पड़ता है!

मन्त्री

पञ्चगव्य में से कोई एक वस्तु है अवश्य। किन्तु, महाराज, ऐसे ही मनुष्य काम देते हैं। उसको जैसा बतलाया

गया, दिन पर दिन ठीक वैसा ही करता जा रहा है। बुद्धि अधिक होने से काम यन्त्र की तरह नहीं चलता।

रणजित

मन्त्री, वह आकाश में क्या है ?

मन्त्री

भूल गये महाराज, वही तो विभूति के यन्त्र का चूड़ा है।

रणजित

इतना स्पष्ट तो किसी दिन न देख पड़ा था।

मन्त्री

आज सबेरे, पानी बरस जाने से आकाश स्वच्छ होगया है, इसीसे इतना स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

रणजित

देखते हो, उसके पीछे से सूर्य मानो क्रुद्ध हो उठे हैं और वह दानव के तने हुए घूँसे के समान जान पड़ता है। यन्त्र को इतना ऊँचा करना अच्छा नहीं हुआ।

मन्त्री

जान पड़ता है, मानो हमारे आकाश के हृदय में बाण बिंध रहा हो।

रणजित

अब मन्दिर चलने का समय होगया है।

[दोनों का प्रस्थान।

[उत्तरकूट के नागरिकों के दूसरे दल का प्रवेश]

१

देखो तो, आजकल विभूति हम लोगों से कैसा फटा

फटा रहता है। हमीं लोगों में से वह भी एक है—इस बात को वह निकाल फेंकना चाहता है। एक दिन वह समझेगा कि मियान से तलवार का बड़ा हो जाना अच्छा नहीं होता।

२

यह चाहे जो कहो, पर भाई, विभूति ने उत्तरकूट का नाम रख लिया।

१

अरे रहने भी दे, तू तो उसकी बड़ाई का पुल बाँधने लगा। बाँध को बाँधते बाँधते उसकी जीभ निकल पड़ी, कुछ नहीं तो दश बार टूटा होगा!

३

और अब फिर न टूटेगा, यही कौन जानता है?

१

तूने कभी बाँध की उत्तर ओर का वह स्तूप देखा है?

२

क्यों, क्या बात है?

१

क्या बात है? जानता नहीं? जो देखता है वही कहता है—

२

क्या कहता है?

१

क्या कहता है? तू निरा भोंदू ही रहा! यह भी कोई पूछने की बात है? वह सब कथा कहाँ तक कहूँ!

२

तो भी बात क्या है, कुछ कहो न—

१

कहूँ क्या, ठहर जा रञ्जन, सब स्पष्ट समझ में आ जायगा। जब हठात् एकबारगी—

२

सर्वनाश! क्या कहते हो दादा? हठात् एकबारगी ही?

१

हाँ भाई, झगड़ू से सुना नहीं? वह स्वयं नाप जोखकर देख आया है।

२

झगड़ू में यह एक बड़ा गुण है कि उसका मत्था ठण्ढा रहता है। सब लोग जब प्रशंसा करने में व्यस्त हो जाते हैं, तब वह न जाने कहाँ से नाप तौलकर एक नया परिणाम निकाल लेता है!

३

और भाई, कोई कोई कहता है, विभूति में जो कुछ विद्या है, सब—

१

मैं भलीभाँति जानता हूँ, वेङ्कट वर्मा के पास से चुराई हुई है। वह एक ही गुनी था—उसकी कितनी बड़ी खोपड़ी थी—किन्तु दिन समय की बात! विभूति को राजपुरस्कार मिल रहा है और वह बेचारा भूखों मर गया।

२

क्या, केवल न खाने से ही?

१

अरे, बिना खाये या किसके हाथ से क्या खाकर, इन बातों से क्या मतलब ? न मालूम कहाँ कौन हो—चुगुलखोरों की कमी नहीं है। इस देश के लोग किसी का भला नहीं देख सकते।

२

सो तुम चाहे जो कहो, किन्तु वह—

१

हाँ, सो क्यों नहीं ? सोचो तो, उसका जन्म किस धरती में हुआ है ? इसी चवुआ गाँव में हमारे परबाबा रहते थे, उनका नाम सुना है न ?

२

सुना क्यों नहीं भाई, उत्तरकूट में उनका नाम कौन नहीं जानता ? लोग उनको—देखो, क्या कहते थे—

१

हाँ, हाँ, भास्कर। सुँघनी बनाने में ऐसा उस्ताद देश भर में दूसरा नहीं हुआ। उनके हाथ का नास पाये बिना राजा शत्रुजित का एक दिन भी न चलता था।

३

बातें तो होती ही रहेंगी, आओ अब मन्दिर चलें। हम ठहरे त्रिभूति के गाँव के लोग—हमारी मालायें वह पहले ग्रहण करेगा, पीछे औरों को। हमीं लोग तो उसके दाईं ओर बैठेंगे।

(नेपथ्य में)

मत जाओ भाई, मत जाओ, लौट जाओ !

२

यह लो, बटुक बाबा आ रहे हैं।

[बटुक का प्रवेश – शरीर पर फटा कम्बल, हाथ में एक टेढ़ी लाठी, केश बिखरे हुए।]

१

कहाँ जा रहे हो, बटुक बाबा ?

बटुक

सावधान, भाई सावधान ! इस राह मत जाना। उजेले उजेले लौट जाओ।

२

क्यों, बतलाओ तो ?

बटुक

बलि देगा, बलि ! नरबलि ! मेरे दो जवान नातियों को बलपूर्वक ले गया; वे फिर न लौटे।

३

बाबा, बलि देगा ? किसके आगे ?

बटुक

तृष्णा, तृष्णा दानवी के आगे।

२

वह कौन है ?

बटुक

वह जितना खाती है उतना ही माँगती है—उसकी शुष्क रसना घी पड़ने से प्रज्वलित अग्निशिखा के समान बढ़त ही जाती है।

१

पागल कहीं के! हम लोग तो जाते हैं उत्तरभैरव के मन्दिर, वहाँ तृष्णा दानवी कहाँ?

बटुक

सुना नहीं? भैरव को वे आज मन्दिर से विदा करने जा रहे हैं। अब वेदी पर तृष्णा आसीन होगी।

२

चुप, चुप, पागल! ऐसी बातें सुनेंगे तो उत्तरकूटवाले तुझे मारते मारते अधमरा कर डालेंगे।

बटुक

वे तो मुझ पर धूल झोंकते हैं और लड़के ढेले मारते हैं। सब कहते हैं कि तेरे दो नातियों ने प्राण दिये, यह उनका सौभाग्य है!

१

वे झूठ नहीं कहते।

बटुक

झूठ नहीं कहते? प्राण देकर यदि प्राणों की रक्षा न हो, मृत्यु से यदि काल का ही आवाहन हो, तब भला भैरव इतनी बड़ी हानि क्यों सहेंगे? सावधान भाई, सावधान, उस राह भूल कर भी न जाना।

२

दादा, मेरे तो रोंगटे खड़े हो रहे हैं!

१

रंजू तू बड़ा डरपोक है। चल, चल।

[सब का प्रस्थान।

[युवराज अभिजित और राजकुमार सञ्जय का प्रवेश]

सञ्जय

समझ में नहीं आता युवराज, तुम राजमन्दिर को क्यों छोड़े जा रहे हो ?

अभिजित

सब बातें तुम्हारी समझ में न आवेंगी। मेरे जीवन का स्रोत राजमन्दिर के पत्थरों को लाँघकर निकल जायगा—इस मन्त्र को लेकर ही मैं पृथ्वी पर आया हूँ।

सञ्जय

कुछ ही दिनों से तुम्हें इतना उद्विग्न देखता हूँ। हमलोगों के साथ तुम जिस बन्धन में बँधे हो, वह धीरे धीरे शिथिल होता आ रहा था। आज क्या वह टूट हो गया ?

अभिजित

सञ्जय, वह देखो, गौरीशिखर के ऊपर सूर्य्य की अस्त-गामी मूर्ति। मानो आग का पक्षी मेघों के पर फैलाये हुए रात्रि की ओर उड़ा जा रहा है। मेरे इस यात्रापथ के चित्र को अस्तगामी सूर्य्य ने आकाश में अङ्कित कर दिया है।

सञ्जय

और यह नहीं देखते युवराज, इस यन्त्र का शिखर सूर्य्यास्तकालीन मेघ के वक्ष को वेध कर ऐसे खड़ा है मानो उड़ते हुए पक्षी के कलेजे में वाण बिंध रहा हो और वह अपने लड़खड़ाते डैनों से रात्रि की गुफा में गिरा जा रहा हो। मुझे तो यह नहीं सुहाता। अब विश्राम का समय हुआ। युवराज, आओ राजमन्दिर चलें।

अभिजित

जहाँ बाधा है, वहां विश्राम कहां ?

सञ्जय

राजमहल में तुम्हारे लिये बाधा है, इसे इतने दिनों बाद तुमने कैसे जाना ?

अभिजित

जाना, जब सुन पाया कि उन लोगों ने मुक्तधारा में बाँध बाँधा है।

सञ्जय

तुम्हारी इस बात का अर्थ मेरी समझ में नहीं आया।

अभिजित

मनुष्य का आन्तरिक रहस्य, विधाता कहीं न कहीं बाहर लिखकर रख छोड़ता है, मेरे अन्तर की कथा मुक्तधारा में निहित है। उसी मुक्तधारा के पैरों में जब उन लोगों ने लोहे की बेड़ियाँ डालीं तब मानो मैं हठात् चौंक पड़ा और समझा कि उत्तरकूट का सिंहासन ही मेरे जीवनस्रोत का बाँध है। उसीका मार्ग खोलने के लिये निकला हूँ।

सञ्जय

युवराज, मुझे भी अपना सङ्गी बना लो।

अभिजित

नहीं भाई, अपना पथ तुम्हें स्वयं खोज निकालना होगा। तुम मेरे पीछे यदि चलोगे तो मैं ही तुम्हारे पथ का रोड़ा होऊँगा।

सञ्जय

इतने निष्ठुर न बनो, तुम्हारे इस निष्ठुर व्यवहार से मेरे हृदय में चोट लगती है।

अभिजित

तुम मेरे हृदय को जानते हो, इसलिये चोट खाकर भी तुम मुझे समझोगे।

सञ्जय

किस पुकार पर तुम निकल पड़े हो, यह मैं न पूछूँगा। किन्तु युवराज, इस दिनावसान के समय राजमन्दिर के बन्दीगण के इस सन्ध्या-गान में क्या कोई पुकार नहीं है? जो कठिन है उसका गौरव हो सकता है, किन्तु जो मधुर है उसका भी तो मूल्य है।

अभिजित

भाई, उसी का मूल्य चुकाने के लिये तो कठिन की साधना है।

सञ्जय

सबेरे जिस आसन पर तुम पूजन के लिये बैठा करते हो; याद तो है, उस दिन उसीके सामने एक श्वेत पद्म देख कर तुम विस्मित हो उठे थे! तुम्हारे जागने के पहले ही, कितने सबेरे किसी ने वह पद्म चुपचाप तोड़कर ला रखा था! उसने यह भी न जानने दिया कि वह कौन है—इस छोटी सी बात के भीतर कितना माधुर्य छिपा है, क्या आज यह सोचने की बात नहीं? जो भीरु, अपने को तो छिपा सकी, किन्तु अपनी पूजा को न छिपा सकी, उसका मुखड़ा क्या तुम्हारे मन में नहीं आ रहा?

अभिजित

आ क्यों नहीं रहा। इसीलिये तो इस वीभत्स को, जो धरती के सङ्गीत का अवरोध करके आकाश में

लौहदन्त निकाले, अट्टहास कर रहा है, देख नहीं सकता। स्वर्ग प्रिय है इसी कारण तो दैत्यों से लड़ाई करने में दुविधा नहीं करता।

सञ्जय

गोधूलि का आलोक इस नील पर्वत पर मूर्च्छित हो रहा है—इसमें से होकर क्रन्दन की एक मूर्त्ति क्या तुम्हारे हृदय तक नहीं पहुँचती?

अभिजित

हाँ, पहुँचती है। मेरा हृदय भी क्रन्दन से ओतप्रोत है। मुझे कठोरता का अभिमान नहीं है। देखो, वह पक्षी देवदारु की सबसे ऊँची डाल पर अकेला बैठा है; वह घोंसले में जायगा अथवा अँधेरे में प्रवास के लिये सुदूर जंगल की यात्रा करेगा, पता नहीं; किन्तु वह चुपचाप सूर्यास्त की ओर देख रहा है और उसका इस प्रकार देखना मेरे हृदय में आकर बज उठता है। यह पृथ्वी कितनी सुन्दर है! किन्तु आज मैं उन सबसे नमस्कार करता हूँ जो मेरे जीवन को मधुर बना रहे हैं।

[बटुक का प्रवेश]

बटुक

नहीं जाने दिया, मार कर लौटा दिया।

अभिजित

क्या हुआ बटुक, तुम्हारी खोपड़ी फट रही है और उससे रक्त बह रहा है!

बटुक

मैं सबको सावधान करने निकला था। कहता था, 'उस राह मत जाओ, लौट जाओ।'

अभिजित

क्यों, क्या बात है ?

बटुक

जानते नहीं युवराज ? लोग आज यन्त्रवेदी पर तृष्णा राक्षसी की स्थापना करेंगे ! नरबलि की आवश्यकता है।

सञ्जय

यह कैसी बात ?

बटुक

उसी वेदी को बनाते समय मेरे दो नातियों का रक्त बहा चुके हैं। सोचा था, पाप की वेदी आपसे आप ढह गिरेगी किन्तु अब तक भी न ढही, भैरव भी न जागे।

अभिजित

ढहेगी। समय आ गया है।

बटुक

(निकट आकर धीरे धीरे) तब सुना है तुमने, जान पड़ता है ? भैरव का आह्वान तुमने सुना है ?

अभिजित

हां, सुना है।

बटुक

सर्वनाश ! तब तो तुम्हारा निस्तार नहीं ?

अभिजित

हां, नहीं है।

बटुक

यह देखो न, मेरे सिर से रक्त बह रहा है, समस्त

देह धूल से भरी है। सह सकोगे क्या युवराज, जब वक्ष विदीर्ण हो जायगा ?

अभिजित

भैरव की कृपा से सह सकूँगा।

बटुक

चारों ओर जब सब शत्रु ही होंगे ? अपने लोग भी जब धिक्कारेंगे ?

अभिजित

सहना ही होगा।

बटुक

तब भय नहीं है।

अभिजित

नहीं, भय नहीं है।

बटुक

अच्छा, ऐसी बात है तो इस बटुक को याद रखो। मैं भी इसी पथ का पथिक हूँ। भैरव ने मेरे ललाट पर यह जो रक्ततिलक अंकित कर दिया है इससे अन्धकार में भी तुम मुझे पहचान सकोगे।

[बटुक का प्रस्थान।

(राजप्रहरी उद्धव का प्रवेश]

उद्धव

नन्दिसंकट का पथ क्यों खोल दिया, युवराज ?

अभिजित

शिवतराई के लोगों को नित्य दुर्भिक्ष से बचाने के लिये।

उद्धव

महाराज तो उनकी सहायता के लिये प्रस्तुत ही थे, उनके हृदय में भी तो दयामया है।

अभिजित

दायें हाथ से कृपणता के साथ पथ बन्द करके बायें हाथ से उदारता दिखलाकर किसी को बचाया नहीं जा सकता। इसीसे उन लोगों के अन्न आनेजाने का मार्ग मैंने खोल दिया है। दया पर निर्भर करनेवाली दीनता मैं नहीं देख सकता।

उद्धव

महाराज कहते हैं कि नन्दिसंकट का गढ़ तोड़कर आपने उत्तरकूट के पत्तल में छेद कर दिया है।

अभिजित

सदा शिवतराई के अन्नजीवी बने रहने की दुर्गति से मैंने उत्तरकूट को मुक्त कर दिया है।

उद्धव

दुःसाहस किया है। महाराज खबर पा चुके हैं, इससे अधिक नहीं कह सकता। हो सके तो अभी यहां से निकल जाइए। मार्ग में खड़े होकर आप से बातें करना भी निरापद नहीं है।

[उद्धव का प्रस्थान।

[अम्बा का प्रवेश]

अम्बा

सुमन! बेटा सुमन! जिस मार्ग से उसे ले गये उस मार्ग से क्या तुम लोग कोई नहीं जाते?

अभिजित

तुम्हारे पुत्र को ले गये ?

अम्बा

हाँ, इसी पश्चिम की ओर, जहां सूर्य डूबता है, जहाँ दिन छिपता है !

अभिजित

इसी मार्ग से मैं जाऊँगा।

अम्बा

तब इस दुखिनी की एक बात याद रखना—जब उससे भेंट हो, कहना, माँ तुम्हारी बाट जोह रही है।

अभिजित

कहूँगा।

अम्बा

बेटा, चिरञ्जीवी होओ। सुमन, मेरे सुमन !

[प्रस्थान।

[भैरवपंथियों का प्रवेश और गान—

(गान)

जय भैरव, जय शंकर,
जय जय जय प्रलयंकर।
जय संशय-भेदन जय बन्धन-छेदन
जय संकट-संहर,
शङ्कर, शङ्कर !

[प्रस्थान।

[सेनापति विजयपाल का प्रवेश]

विजयपाल

युवराज, राजकुमार, मेरा विनीत अभिवादन स्वीकार कीजिये। महाराज के यहाँ से आ रहा हूँ।

अभिजित

उनकी क्या आज्ञा है ?

विजयपाल

एकान्त में कहूँगा।

सञ्जय

(अभिजित का हाथ पकड़कर दबाते हुए) अकेले में क्यों ? मुझ से भी छिपाव ?

विजयपाल

ऐसी ही आज्ञा है। युवराज, राजशिविर में पदार्पण कीजिए।

सञ्जय

मैं भी साथ चलूँगा।

विजयपाल

महाराज यह नहीं चाहते।

सञ्जय

तब मैं यहीं पर बाट जोहता रहूँगा।

[अभिजित को लेकर विजयपाल ने शिविर की ओर प्रस्थान किया।]

[गोसाईं का प्रवेश]

गान ×

अब रही न कोई आस !
लौटेगा न छोड़कर अपना वह दूरस्थ प्रवास।
आँधी के झोंके में नौका पड़ी बिना आधार,
बही, चली उतरा, न लगेगी आकर कभी किनार।
किस पागल की किस बेला में कैसी मची पुकार,
सुन कर जिसे पयान किया हा ! दिया छोड़ घरबार।
आह ! रहा बस रो रो कर अब लेना शोकोच्छ्वास,
बाहुलता फिर बाँध रख सकेगा न हृदय के पास।

[प्रस्थान

[फूलवाली का प्रवेश]

फूलवाली

भाई, उत्तरकूट का विभूति कौन है ?

सञ्जय

क्यों, उससे तुम्हारा क्या काम है ?

फूलवाली

मैं विदेशी हूँ, देवतली से आरही हूँ। सुना है उत्तरकूट के सभी लोग उसके मार्ग में फूलों की वर्षा करते हैं । जान

× ओ त आर फिर्‌बे ना रे, फिर्‌बे ना आर, फिर्‌बे ना रे !
झड़ेर मुखे भास्‌ल तरी
कूले आर भिड़्‌बे ना रे।
कोन पागले निल डेके,
काँदन गेल पिछे रेखे,
ओके तोर बाहुर बाँधन घिरबे ना रे।

पड़ता है, कोई साधु पुरुष है ? बाबा का दर्शन करूँगी, यही सोचकर अपनी फुलवारी के फूल लाई हूँ।

सञ्जय

साधु नहीं तो, बुद्धिमान अवश्य है।

फूलवाली

क्या काम किया है उन्होंने ?

सञ्जय

हमारे झरने को बाँधा है।

फूलवाली

इसी पर पूजा ? बाँध से देवता का काम होगा ?

सञ्जय

नहीं, देवता के हाथों में बेड़ियाँ पड़ेंगी।

फूलवाली

इसीलिये पुष्पवृष्टि ? समझी नहीं।

संजय

न समझना ही अच्छा है। देवता के फूल अपात्र में नष्ट न करो, लौट जाओ ! हाँ, सुनो, मेरे हाथ अपना यह श्वेत पद्म बेंचोगी ?

फूलवाली

जो फूल साधु को भेंट देने के विचार से लाई हूँ उसे न बेंच सकूँगी।

संजय

मैं जिस साधु की सब से अधिक भक्ति करता हूँ उसी को दूँगा।

फूलवाली

तब ले लो। मूल्य न लूंगी। बाबा को मेरा प्रणाम कहना। कहना मैं देवतली की दुखिया फूलवाली हूँ।

[प्रस्थान ।

[विजयपाल का प्रवेश]

संजय

भइया कहां हैं ?

विजयपाल

शिविर में कैद हैं।

संजय

युवराज कैद ! यह कैसा दुस्साहस ?

विजयपाल

यह देखो, महाराज का आदेशपत्र।

संजय

यह किसका षड़यन्त्र है ? मुझे एक बार उनके पास जाने दो।

विजयपाल

क्षमा करें।

संजय

तब, मुझे भी बन्दी करो, मैं भी विद्रोही हूँ।

विजयपाल

आदेश नहीं है।

संजय

अच्छा, तो मैं आदेश लेने जाता हूँ। (कुछ दूर जाकर फिर लौटकर) विजयपाल, यह पत्र मेरी ओर से भइया को दे देना।

[दोनों का प्रस्थान।

[शिवतराई के धनंजय वैरागी का प्रवेश]

(धनंजय गाता है)

गान *

अब भय से भय न करूंगा।
'मा भैः' मंत्र हृदय में रख भवसागर पार करूंगा।

---

* आमि मारेर सागर पाड़ि देब
विषम झड़ेर बाये
आमार भय-भांगा एइ नाये।
माभैः वाणीर भरसा निये
छेंड़ापाले बुक फुलिये
तोमार ऐ पारेतेइ जाबे तरी
छायाबटेर छाये।
पथ आमारे सेइ देखाबे
जे आमारे चाय—
आमि अभय मने छाड़ब तरी
एइ शुधु मोर दाय।
दिन फुरोले जानि जानि
पौंछे घाटे देब आनि
आमार दुःखदिनेर रक्तकमल
तोमार करुण पाये।

अत्याचार बवंडर में खो जा भयभंगी नौका,
पाल उड़ा छायातरु की छाया में जा उतरूंगा।
वही दिखावेगा पथ मुझको जो है मेरा नेही,
तरी छोड़ दूँगा मैं अपनी तनिक न विचलित हूँगा।
है विश्वास घाट पहुचूंगा सन्ध्या होते होते,
दुखमय दिन के रक्तकमल ले चरणों पर रक्खूंगा।

[शिवतराई की प्रजा के एक दल का प्रवेश]

धनंजय

मुंह चूना जैसे सफेद हो रहा है! क्यों रे, क्या बात है?

१

बाबा, राजा के साले चण्डपाल की मार अब नहीं सही जाती। वह हमारे युवराज को ही नहीं मानता, यह और भी असह्य हो उठा है।

धनंजय

क्यों रे, मार को अब भी न जीत सका? अब भी चोट लगती है?

२

राजा की ड्योढ़ी पर ले जाकर मारते हैं! घोर अपमान!

धनंजय

तुम लोग अपने मान को अपने पास मत रखो; हृदय के अन्तर में जो भगवान हैं उन्हीं के पैरों के पास रख दो, वहाँ अपमान न पहुँचेगा।

[गणेश सर्दार का प्रवेश]

गणेश

अब नहीं सहा जाता, दोनों भुजायें फड़क रही हैं।

धनञ्जय

तो यह कहो, दोनों हाथ बेहाथ हो गये।

गणेश

बाबा, एक बार आज्ञा दीजिए, इस उद्दण्ड चण्डपाल के हाथ से दण्ड छीन कर मार किसे कहते हैं, उसको दिखा दें।

धनञ्जय

मार किसे नहीं कहते, यह नहीं दिखा सकते? बल अधिक बढ़ गया है, जान पड़ता है? सुनो, डांड़ चलाते रहने से लहरें नहीं थमतीं, पतवार को स्थिर रखने से ही लहरों पर विजय प्राप्त होती है।

४

तब क्या करने को कहते हो?

धनञ्जय

मार की मूल को ही निर्मूल करदो।

२

यह कैसे होगा, बाबा?

धनञ्जय

सिर ऊँचा करके जिस समय कह सकोगे कि चोट नहीं लगती, उसी समय मार की जंजीर टूट जायगी।

२

चोट नहीं लगती, यह कहना बड़ी व

धनञ्जय

मूल पुरुष के चोट नहीं लगती, वह तो आलोकशिखा है। चोट लगती है पशु को, वह केवल मांसपिण्ड है, मार खाकर कें कें करके मर जाता है। क्यों रे, भौचक्का सा क्यों हो गया? बात समझ में नहीं आई?

२

हम लोग तो तुम्हें समझते हैं; तुम्हारी बातों को न समझें भी तो क्या?

धनञ्जय

तभी तो सर्वनाश हो रहा है।

गणेश

बातों को समझने के लिए समय चाहिए, किन्तु हमें इतना धीरज नहीं; तुम को समझ लिया है, बस समय रहते रहते पार हो जाएँगे।

धनञ्जय

उसके बाद जब सन्ध्या होगी तब देखोगे कि नौका किनारे लगते लगते डूब गई। जो बात पक्की है उसे यदि भीतर से पक्के रूप में न समझोगे तो डूबोगे।

गणेश

ऐसी बात न कहो बाबा! जब तुम्हारे चरणों का आश्रय मिला है तब जिस तरह भी हो, समझ लिया है।

धनञ्जय

नहीं, तुम ठीक नहीं समझे! तुम लोगों की

आँखों में खून उतर आया है, तुम्हारे गलों से सुर नहीं निकलता। मैं सुर छेड़ दूं?—

गान*

अभी और भी मारें, प्रभु मारें, फिर मारें,
हाँ, इसी तरह से मारें ॥ अभी० ॥

अरे डरपोको! मार से बचने के लिये ही तुम दूसरों को मारते हो या भागते हो, दोनों एक ही बात है। दोनों ही बातें पशुओं के दल में पाई जाती हैं पशुपति के दल में नहीं।

कभी कहीं हम छिपते जाके,
भागे फिरते कभी चुराके,
लुका छिपाके, आँख बचाके,
हरदम डर के मारे, छिन जावें धन सारे—
हाँ जो कुछ पास हमारे। अभी और० ॥

देखो भाई, मैं मृत्युञ्जय से अपना निपटारा करने चला हूँ। कहना चाहता हूँ,—"मार से मेरे चोट लगती है या नहीं, तुम

---

* आरो, आरो, प्रभु, आरो, आरो!
एमनि करेइ मारो, मारो!

लुकिये थाकि आमि पालिये बेड़ाइ,
भये भये केवल तोमाय एड़ाइ;
जा-किछु आछे सब काड़ो काड़ो।
एबार जा करबार ता सारो, सारो,
आमिइ हारि, किम्बा तुमिइ हारो।
हाटे घाटे बाटे करि खेला,
केवल हेसे खेले गेछे बेला,
देखि केमने काँदाते पारो!

स्वयं मार कर देख लो।" जो डरते हैं या डर दिखलाते हैं उनका भार कन्धों पर लेकर आगे न बढ़ सकूँगा।

हाट बाट औ घाट सभी में,
बीती बेला खेल हँसी में,
आप करें अब जो हो जी में,
आह तनिक भी काढ़ें, जी हारें, मन मारें,
तो प्रभु जीते हम हारे। अभी और० ॥

सब

धन्य हो, बाबा, यही सही!—तो प्रभु जीते हम हारे!

२

पर बाबा, तुम कहाँ जा रहे हो, यह तो कहो?

धनंजय

राजा के उत्सव में।

३

परन्तु राजा का उत्सव तो तुम्हारा उत्सव नहीं है। तुम बाबा, वहां क्या करने जाओगे?

धनंजय

राजसभा में नाम कर आऊंगा।

४

राजा तुम्हें एकबार पञ्जे में पाकर—नहीं, नहीं, सो न होगा!

धनंजय

क्यों न होगा? होगा, भरपूर होगा!

१

तुम राजा से नहीं डरते, किन्तु हम लोग डरते हैं।

धनंजय

तुम लोग मनहीमन मारने की इच्छा रखते हो •इसीसे डरते हो, मैं मारना नहीं चाहता इसीसे नहीं डरता। जिस के भीतर हिंसा है, डर उसी को काटने दौड़ता है।

२

तब ठीक है। हाँ बाबा, हमलोग भी तुम्हारे साथ चलेंगे।

३

हम भी राजदरबार करेंगे।

धनंजय

क्या मांगोगे ?

३

माँगने को तो बहुत है, मिले भी तो ?

धनंजय

राजत्व माँगोगे ?

३

हँसी करते हो, बाबा ?

धनंजय

हँसी क्यों करूंगा ? एक पैर से चलने के समान और कौन सा दुख है ? यदि राज्य केवल राजा का ही हो, प्रजा का न हो; तो उस लँगड़े राज्य का कूदना देखकर तुम लोग तो केवल झिझक सकते हो, किन्तु देवता रो पड़ता है। सुनो, राजा के हितके लिये ही राजत्व का दावा करना होगा !

२

और जब मार पड़ेगी ?

धनंजय

राजसभा से भी जो ऊपर है वह जब सुन लेता है तब राजदण्ड राजा को ही दण्डित करता है।

गान ※

निज सिंहासन देने को प्रभु !
बारम्बार पुकार रहे।
भूल इसे रह रह कर यों ही,
नाहक दर दर छान रहे।

सच बात कहूँ ? जबतक उन्हीं का आसन कहकर न पहिचानोगे तबतक सिंहासन पर दावा नहीं चलने का, न राजा का न प्रजा का। वह तो छाती फुलाकर बैठने की जगह नहीं—वहाँ तो हाथ जोड़ कर बैठना होता है।—

※ भूले जाइ थेके थेके
तोमार आसन परे बसाते चाओ
नाम आमोदेर हेंके हेंके।
द्वारी मोदेर चेने ना जे,
बाधा देय पथेर माझे,
बाहिरे दाँड़िये आछि,
लओ भितरे डेके डेके।
मोदेर प्राण दियेच आपन हाते
मान दियेच तारि साथे।
थेके ओ से मान थाके ना जे
लोभे आर भये लाजे,
म्लान हय दिने दिने
जाय धूलोते ढेके ढेके।

द्वारपाल बाधा हैं मग में
द्वार छेक अड़े हुए।
लो पुकार भीतर को स्वामी !
बाहर हम हैं खड़े हुए।

द्वारपाल क्या यों ही नहीं पहचानता ? धूल लग लग कर ललाट का राजतिलक भी तो मिट गया है। भीतर वश में नहीं कर पाये, बाहर राज्य करने दौड़ पड़े ? राजा होने से ही राजसिंहासन पर बैठा जाता है, पर राजसिंहासन पर बैठने से ही कोई राजा नहीं हो जाता।

निज हाथों से प्राण दिये थे,
मान तिलक भी उसके साथ।
पर अब मान नहीं रहता है,
रह कर भी प्रभु ! मेरे हाथ।
लोभ लाज औ भय के मारे,
होता जाता प्रभाविहीन।
नाथ ! तुम्हारा दिया तिलक,
हो रहा आज है धूलिविलीन।

१

जो भी हो; राजद्वार क्यों जा रहे हो, यह न समझ सका, बाबा।

धनञ्जय

क्यों जा रहा हूँ—बतलाऊँ ? मैंने बड़ा भारी धोखा खाया है।

१

सो कैसे ?

धनञ्जय

तुमलोग मुझे जितना ही जकड़ कर धरते हो उतना ही तैरने की शिक्षा में पिछड़ रहे हो। मेरा पार होना भी कठिन हो रहा है। इसी से छुट्टी पाने के लिये वहाँ जा रहा हूँ, जहाँ मुझे कोई नहीं मानता।

१

किन्तु राजा तुमको तो सहज में न छोड़ देगा।

धनञ्जय

छोड़ क्यों देगा! यदि मुझको बाँध सके, तो फिर सोचने को और क्या रहा!

गान *

सोच होवेगा फिर कैसा?
मुझको बाँध सके जो कोई वह क्या ऐसा वैसा?
मुझसे पहले बँध जावे फिर करे कहूँ मैं जैसा।

---

* आमाके जे बाँध्बे धरे, एइ हबे जा'र साधन,
से कि अमूनि हबे?
आमार काछे पड़ले बाँधा सेइ हबे मोर बाँधन,
से कि अमूनि हबे?
के आमारे भरसा करे आनूते आपन वशे?
से कि अमूनि हबे?
आपनाके से करुक ना वश, मजुक् प्रेमेर रसे,
से कि अमूनि हबे?
आमाके जे काँदावे तार भाग्ये आछे काँदन
से कि अमूनि हबे?

वही बाँध सकता है मुझको और न ऐसा वैसा।
जिसके वश में मन हो पूरा चले चलावे जैसा।
प्रेमसुरस में सना हुआ हो वह होवेगा कैसा ?
मैं जिसके वियोग में रोता वह क्या ऐसा वैसा ?

२

किन्तु बाबा, तुम्हारे ऊपर यदि हाथ उठाया जायगा तो, यह तो न सह सकेंगे।

धनञ्जय

मैंने यह देह जिनके चरणों में बेंच दी है यदि वह सहेंगे तो तुम्हें भी सहना होगा।

१

अच्छा, बाबा, चलो सुन-सुना आवें, फिर करम में जो है वह होगा।

धनञ्जय

अच्छा, तुम लोग कुछ देर यहीं बैठो। यहाँ पहिले कभी नहीं आये, राह-घाट का पता लगा कर मैं आता हूँ।

[प्रस्थान।

१

देखते हो भाई, इन उत्तरकूटवालों की कैसी आकृति है ? मांस का एक लोंदा लेकर विधाता ने जो इनको गढ़ना आरम्भ किया तो समाप्त करने का, मानों अवकाश ही न पाया।

२

और देखा है न, उन लोगों का कछौटा मारकर कपड़ा पहनने का ढँग ?

३

मानों अपने को बस्ता में बाँध रखा है, कुछ गिर न जाय !

४

उन लोगों ने मँजूरी करने के लिये ही जन्म लिया है, सात घाट का पानी पीकर सात हाट में केवल घूमते फिरते हैं।

२

उन लोगों में सभ्यता नहीं है, उनके शास्त्रों में है ही क्या ?

१

कुछ भी नहीं। देखा नहीं उनके अक्षर दीमक जैसे होते हैं।

२

सचमुच दीमक जैसे ! उनकी विद्या जिसमें लगती है उसे काट कर टुकड़े टुकड़े कर डालती है।

३

और मिट्टी का टीला उठाती है।

२

वे शस्त्र से मारते हैं प्राणों को, और शास्त्र से मारते हैं मन को।

१

पाप, महापाप ! गुरु जी ने कहा है कि उनकी परछाईं भी भूल कर न लाँघना। जानते हो क्यों ?

२

क्यों, बतलाओ ?

१

नहीं जानते ? समुद्रमन्थन के पश्चात देवताओं के घड़े से अमृत टपक कर जिस मिट्टी पर गिरा था उसी मिट्टी से हमारे

शिवतराई के पूर्वज बनाये गये और फिर जब दैत्यों ने देवताओं के जूठे-रीति घड़े को चाट-चूटकर नाबदान में फेंक दिया तब उस फूटे घड़े के टुकड़ों से उत्तरकूट के पूर्वज गढ़े गये। इसी से तो वे इतने कठोर हैं, किन्तु, थूः—अपवित्र !

३

यह तुमने कहाँ से जाना ?

१

स्वयं गुरु जी ने बतलाया है।

२

(प्रणाम करके) गुरु तुम सत्यरूप हो !

[उत्तरकूट के नागरिकों के एक दल का प्रवेश]

उ १

और सब तो अच्छा हुआ, पर लोहार के छोकड़े विभूति को राजा ने एकदम क्षत्री बना दिया, यह तो—

उ २

वह सब घर की बात है, गांव लौटकर हम लोग समझ-बूझ लेंगे। इस समय बोलो, जय यन्त्रराज विभूति की जय !

उ ३

क्षत्रिय के अस्त्र को वैश्य के यन्त्र से जिसने मिला दिया है, उस यन्त्रराज विभूति की जय।

उ १

अरे ! वह देखो शिवतराई के रहनेवाले !

उ २

कैसे जाना ?

उ १

कनटोप जैसी टोपी नहीं देखते ? वैसे विचित्र देख पड़ते हैं ? मानो ऊपर से थप्पड़ मारकर हठात् किसी ने उनकी बाढ़ रोक दी है।

उ २

और भी तो देश हैं, किन्तु केवल यही लोग कनटोप जैसी टोपी क्यों पहनते हैं ? क्या ये सोचते हैं कि कान विधाता की भूल है ?

उ १

कान पर बाँध बाँधा है कि बुद्धि कहीं निकल कर भाग न जाय !

[सब हँसते हैं]

उ ३

इसलिये ? नहीं, इसलिये कि भूलकर बुद्धि कहीं भीतर न घुस जाय !

[हँसी]

उ १

और इसलिये भी, कि कहीं उत्तरकूट का कान उमेठनेवाला भूत उनके कान न पा जाय ! (हँसी) ओ शिवतराई के उजबको ! बोलते क्यों नहीं, काठ मार गया है क्या ?

उ ३

जानते नहीं, आज हम लोगों का बड़ा दिन है। बोलो यन्त्रराज विभूति की जय !

उ १

बोल नहीं फूटता ? गला रुँध गया है क्या ? टेंटुवा दबाये

बिना, जान पड़ता है, बोल बाहर न निकलेगा ? बोलो यन्त्र-राज विभूति की जय !

गणेश

क्यों विभूति की जय, क्या किया है उसने ?

उ १

क्या कहा ? क्या किया है उसने ? इतनी बड़ी बात अभी तक तुम तक न पहुँची ? कनटोप जैसी टोपी का गुण देखा ?

उ ३

तुम लोगों के पीने का जल उसी के हाथ में है; वह दया न करेगा तो अनावृष्टि की मेढ़की के समान सूखकर मर जाओगे।

शि २

पीने का जल विभूति के हाथ में ? हठात् वह क्या देवता हो गया ?

उ २

देवता को छुट्टी देकर देवता का काम स्वयं ही सँभाल लेगा।

शि १

देवता का काम ! उसका एक नमूना तो देखें ?

उ १

मुक्तधारा का बाँध।

[शिवतराईवालों का उच्चस्वर से हँसना]

उ १

इसको क्या तुम लोगों ने ठट्ठा समझा है ?

गणेश

ठट्ठा नहीं तो और क्या? मुक्तधारा बांधेगा? भैरव ने जो अपने हाथों दिया है उसे तुम्हारा लोहार का छोकड़ा छीन सकेगा?

उ १

आँखों देखो न, वह सामने आकाश में।

शि १

बापरे, यह क्या है?

शि २

मानो एक लोहे का पतंग आकाश में छलांग मारने जा रहा है।

उ १

इसी पतंग ने टाँग अड़ाकर तुम लोगों का जल रोक दिया है।

गणेश

रहने दो अपनी यह गप्पें। किसी दिन कहोगे कि इसी पतंग के डैने पर बैठकर तुम्हारा लोहार का छोकड़ा चाँद पकड़ने जा रहा है।

उ १

यह देखो, कान ढकने का गुण! ये लोग सुनकर भी नहीं सुनते, तभी तो मर रहे हैं!

शि १

हम लोग मर कर भी न मरेंगे, प्रण किया है।

उ ३

अच्छा किया है, कौन बचावेगा?

गणेश

हमारे देवता को नहीं देखा? प्रत्यक्ष देवता? हमारे धनञ्जय बाबा? उनकी एक देह मन्दिर में है और एक देह बाहर है।

उ २

सुनो, कनढ़ के क्या कहते हैं! इन लोगों को मरने से कोई न बचा सकेगा।

[उत्तरकूटवालों का प्रस्थान ।

[धनञ्जय का प्रवेश]

धनंजय

क्या बकते थे मूर्खो? हमारे ही ऊपर तुम लोगों के बचाने का भार है? तभी तो मर मर कर भूत हो रहे हो।

गणेश

उत्तरकूटवाले हम लोगों को धमका गये हैं कि विभूति ने मुक्तधारा का बाँध बाँधा है।

धनंजय

बाँध बाँधा है, यह कहा?

गणेश

हां, बाबा।

धनंजय

पूरी बात नहीं सुनी, जान पड़ता है!

गणेश

वह क्या सुनने की बात थी? हँसकर उड़ा दिया।

धनञ्जय

तुम लोगों ने अपने कान केवल मेरे ही जिम्मे रख छोड़े हैं ? तुम सबके सुनने की बातें क्या मुझे ही सुननी पड़ेंगी ?

शि २

बाबा, उसमें सुनने की बात ही क्या थी ?

धनञ्जय

क्या कहता है रे ? जो दुरन्त शक्ति है, उसे बाँधना क्या छोटी बात है ? वह शक्ति भीतर हो या बाहर हो ।

गणेश

बाबा, तो यही कहकर हमारे पीने का जल रोक देंगे ?

धनञ्जय

यह दूसरी बात है । इसे भैरव न सहेंगे । तुम सब बैठो, मैं पता लिये आता हूँ । जगत वाणीमय है, उसको जिस ओर से सुनना बन्द कर दोगे उसी ओर से मृत्युवाण आवेगा ।

[धनञ्जय का प्रस्थान ।

[शिवतराई के एक नागरिक का प्रवेश]

शि ३

अरे, यह तो भीखन है ! क्या खबर है ?

भीखन

राजा ने युवराज को शिवतराई से वापस बुला लिया है, उन्हें अब वहाँ न रखेंगे ।

सब

यह नहीं होने का, किसी प्रकार नहीं होने का ।

भीखन

क्या करोगे ?

सब

लौटा ले जायँगे।

भीखन

कैसे ?

सब

जबरदस्ती ।

भीखन

राजा से ?

सब

हम राजा को नहीं मानते ।

(रणजित और मन्त्री का प्रवेश)

रणजित

किस को नहीं मानते ?

सब

प्रणाम ।

गणेश

आपसे प्रार्थना करने आये हैं।

रणजित

कैसी प्रार्थना ?

सब

हम लोग युवराज को चाहते हैं ।

रणजित

क्या कहा ?

सब

हाँ, युवराज को शिवतराई ले जायँगे।

रणजित

और आनन्द के मारे भूमिकर देना भूल जाओगे ?

सब

अन्न बिना मर जो रहे हैं।

रणजित

तुम लोगों का सरदार कहाँ है ?

शि २

(गणेश को दिखाकर) यह हैं हमारे गणेश सरदार।

रणजित

यह नहीं, वह तुम लोगों का वैरागी ?

गणेश

वह आ रहे हैं।

[धनञ्जय का प्रवेश]

रणजित

तुम्हीं ने इस प्रजा को पागल बना दिया है ?

धनञ्जय

इन्हें ही पागल नहीं बना दिया, स्वयं भी तो पागल हो रहा हूँ।—

(गान)*

कौन पागल, करके पागल,
है फिराता गली गली ।
मृदुल सुर से नभ गुँजाता
किस पवन से घड़ी घड़ी ॥ कौन० ॥
खेल कैसा उसने खेला ?
हो गई है व्यतीत बेला;
पुकार कर आकुल है करता
पर न मिलता पकड़ छली ॥ कौन० ॥
छान डाला मैंने सारा
गहन जंगल न्यारा न्यारा,–
रोते रोते मर रहा हूँ
बढ़ रही है बेकली ॥ कौन० ॥

रणजित

पागलपन दिखला कर बात को नहीं दाब सकते । बोलो, कर दोगे या नहीं ?

---

* आमारे पाड़ाय पाड़ाय खेपिये बेड़ाय
कोन् ख्यापा से ?
ओरे आकाश जुड़े मोहन सुरे
कि जे बाजाय कोन् बातासे ?
गेल रे गेल बेला,
पागलेर केमन खेला ?
डेके से आकुल करे, देय ना धरा
तारे कानन गिरि खुँजे फिरि
केंदे मरि कोन् हुताशे !

धनञ्जय

नहीं महाराज, न देंगे।

रणजित

नहीं दोगे? इतना बड़ा दुःसाहस?

धनञ्जय

जो आप का नहीं है वह आप को न दे सकेंगे।

रणजित

हमारा नहीं है?

धनञ्जय

हमारी बचत का अन्न आप का है, हमारे ग्रास का अन्न आप का नहीं।

रणजित

तुम्हीं प्रजा को कर देने से रोक रहे हो?

धनञ्जय

हाँ, वे तो डर कर दे देना चाहते हैं। मैं हीं उन्हें रोक कर कहता हूँ, प्राण उसी को देना जिसने प्राण दिये हैं।

रणजित

तुम अपना भरोसा देकर उनके भय को ढँका नहीं रख सकते। बाहरी भरोसा भङ्ग नहीं हुआ कि भीतर का भय दस-गुने वेग से बाहर निकल पड़ेगा और तब ये सब मरेंगे! देखो बैरागी, तुम्हारे कपाल में दुख लिखा है।

धनञ्जय

जो दुख कपाल में था उसे हृदय में—वहाँ—उतार लिया है जहाँ वह बास करते हैं जो दुखों से परे हैं।

रणजित

(प्रजागण से) मैं तुमलोगों से कहता हूँ, तुमलोग शिवतराई को लौट जाओ ! बैरागो, तुम्हें इसी जगह रहना होगा।

सब

हम लोगों के प्राण रहते यह नहीं होने का।

धनञ्जय

गान*

'रहना होगा' कहके किसको रोका ? आज्ञा है बेकार।
रहने वाला ही रहता है खींचातानी है निःसार ॥
—रहना होगा० ॥

महाराज, हठ से आप कुछ न रख सकेंगे। सरलता से रख सकने की शक्ति यदि होगी तो रख सकेंगे।

---

* रइल् बेले' राख्ले का' रे ?
हुकुम तोमार फलबे कबे ?
टानाटानि टिक्बे ना, भाइ,
र'बार जेटा सेटाइ र'बे।
जा-खुसि ताइ करते पार,
गायेर जोरे राख मार,
जाँर गाये तार व्यथा बाजे
तिनिइ जा' स'न सेटाइ स'बे।
भाव्‌च हबे तुमि जा चाओ,
जगत्‌टाके तुमिइ नाचाओ,
देखबे हटात् नयन मेले
हयना जेटा सेटाओ ह'बे।

रणजित

इस का तात्पर्य ?

धनञ्जय

जो सब देता है, वही सब रखता है। लोभवश जो रखना चाहेंगे वह चोरी का माल है, वह नहीं ठहरने का—

जो जी चाहे सो कर डालें, बल से बाँध रखें या मारें,
जिसका तन है वही सहेगा, सहने लायक जितनी मार॥
—रहना होगा०॥

महाराज ! यहीं भूल रहे हैं, जो समझ रहे हैं कि जगत को बलपूर्वक अधिकार में कर लेने से ही जगत अपना हो गया ! छोड़ रखने से जो पाया जा सकता है मुट्ठी में कस कर पकड़ने से, देखेंगे कि, वह छूट गया है—

आप समझते भावी वश में, जग नाचे मेरी मर्जी से,
सहसा आँखें खोल लखेंगे अनहोनी होती साकार।
—रहना होगा० ॥

रणजित

मन्त्री ! वैरागी को यहीं पकड़ रखो।

मन्त्री

महाराज—

रणजित

यह आज्ञा तुम्हारे मनोनुकूल नहीं हुई ?

मन्त्री

शासन का भीषण यन्त्र तो तैयार हो गया, अब उसके ऊपर भय का और बोझ लादने से सब भंग हो जायगा।

प्रजा

यह हम लोग न सह सकेंगे !

धनञ्जय

जाओ, लौट जाओ।

१

बाबा, युवराज को भी खो चुके हैं—सुना नहीं, जान पड़ता है ?

२

ऐसी दशा में किसके भरोसे मन में बल आवेगा।

धनञ्जय

मेरे बल से ही तुम लोगों को बल है !—यह बात कहोगे तो मुझे केवल दुर्बल बनाओगे।

गणेश

यह कहकर आज हम लोगों को न भुलाना ! हम सब का बल केवल तुम में ही है।

धनञ्जय

तब हार हो गई, मुझे हटना पड़ा।

सब

क्यों बाबा ?

धनञ्जय

मुझको पाकर अपने को खोओगे ? इतनी बड़ी हानि मैं पूरी कर सकूँ, ऐसी सामर्थ्य मुझ में है ? आज बड़ा लज्जित हुआ।

१

यह कैसी बात बाबा? अच्छा, जो करने को कहो वही करें।

धनञ्जय

मुझे छोड़ कर चले जाओ।

२

जाकर क्या करेंगे? तुम हमलोगों को छोड़कर रह सकोगे? हम को प्यार नहीं करते?

धनञ्जय

प्यार के मारे जकड़कर तुम्हें मार डालने की अपेक्षा, प्यार से तुम लोगों को अलग रखना ही अच्छा है। जाओ, और बातें न करो, जाओ।

सब

अच्छा बाबा, जाते हैं, किन्तु,—

धनञ्जय

किन्त क्या रे! सर उठाकर एकबारगी तुम सब निष्किन्तु हो जाओ।

सब

अच्छा, तब जाते हैं।

धनञ्जय

इसी को जाना कहते हैं? जरा फुर्ती से!

गणेश

जाता हूँ, किन्तु हमलोगों की बलबुद्धि यहीं छूटी जा रही है।

[प्रस्थान।

रणजित

क्यों वैरागी, चुप क्यों हो गया ?

धनञ्जय

महाराज, चिन्ता ने धर दबाया है।

रणजित

किस बात की चिन्ता ?

धनञ्जय

तुम्हारे चण्डपाल का दण्डप्रहार भी जो न कर सका था, देखता हूँ मैं वही कर बैठा। इतने दिनों से, समझ रहा था कि मैं इन लोगों की बल-बुद्धि बढ़ा रहा हूँ; आज वे मुँह पर ही कह गये कि मैंने उनकी बल-बुद्धि हर ली है!

रणजित

यह किस प्रकार हुआ ?

धनञ्जय

उन्हें जितना ही उत्तेजित किया वे उतने ही कच्चे रह गये, और क्या कहूँ। जिस के सर पर बहुत सा ऋण है उसके, केवल दौड़ धूप करने से ही तो ऋण नहीं चुक जाता। वे विश्वास करते हैं कि मैं विधाता से भी बड़ा हूँ, उन पर जो ईश्वरीय ऋण है, मैं उसे भी रद्द कर सकता हूँ। इसीलिये वे सब आँख मूँदकर मुझे अपने पूरे बल से पकड़ते हैं।

रणजित

वे तो तुम्हें ही देवता समझते हैं।

धनञ्जय

इसी से तो मुझी तक आकर रुक गये, वास्तविक देवता

तक न पहुँच पाये। भीतर से जो उनका सञ्चालन कर सकता, बाहर से मैंने उसको छिपा रखा।

रणजित

राजा का कर देने जब वे जाते हैं तब तुम बाधा देते हो, पर देवता की पूजा जब तुम्हारे पैरों पर चढ़ती है तब तुम्हें दुख नहीं होता?

धनञ्जय

होता क्यों नहीं! इच्छा होती है, धरती फट जाय और मैं उसमें समा जाऊँ! मुझे पूजा चढ़ाते चढ़ाते सब भीतर ही भीतर दिवालिया हो चले हैं, उस ऋण का भार मेरे गले भी पड़ेगा, देवता न छोड़ेंगे।

रणजित

इस समय तुम्हारा कर्त्तव्य क्या है?

धनञ्जय

उन से अलग रहना। यदि मैंने सचमुच उनके मन की स्वतन्त्र भावना के बाँध को बाँधा हो तो भैरव मेरी और आप के विभूति की एक साथ ही ताड़ना करें!

रणजित

तब देर क्यों? अलग क्यों नहीं हो जाते?

धनञ्जय

मेरे तटस्थ होते ही वे सब एकबारगी तुम्हारे चण्डपाल का गला धर दबावेंगे। उस समय जो दण्ड मुझे मिलना चाहिये वह पड़ेगा उन लोगों की खोपड़ी पर।—यही सोचकर छोड़ते नहीं बनता।

रणजित

तुम स्वयं नहीं छोड़ सकते तो मैं ही छुड़ाये देता हूँ। उद्धव, वैरागी को अभी शिविर में वन्दी कर रखो।

[धनञ्जय को लेकर उद्धव का प्रस्थान।

रणजित

मन्त्री, वन्दीगृह में अभिजित को देख आओ। यदि वह अपने किये पर पछता रहा हो तो—

मन्त्री

एक बार स्वयं जाकर महाराज—

रणजित

नहीं, नहीं, उसने अपने ही लोगों के प्रति विद्रोह किया है। जब तक वह अपराध स्वीकार नहीं करता तब तक उसका मुँह न देखूँगा। मैं राजधानी जाता हूँ, वहीं समाचार देना।

[राजा का प्रस्थान।

[भैरवपन्थियों का प्रवेश]

गान

तिमिरहृद्-विदारण
ज्वलदग्नि-निदारुण,
मरु-श्मशान-सञ्चर,
शङ्कर, शङ्कर !
वज्र घोष-वाणी
रुद्र शूल-पाणि,
मृत्यु-सिन्धु-सन्तर
शङ्कर, शङ्कर !

[प्रस्थान।

[उद्धव का प्रवेश]

उद्धव

यह क्या, युवराज को बिना देखे ही महाराज चले गये ?

मंत्री

हाँ, सामने देखकर कहीं प्रतिज्ञा भङ्ग न हो जाय, इसी भय से। महाराज से न तो शिविर में जाते बनता था और न शिविर छोड़ते ही। इसी द्विविधा में वह वैरागी से इतनी देर बात करते रहे। अच्छा, जाकर युवराज को देख आऊं।

[प्रस्थान।

[दो स्त्रियों का प्रवेश]

१

मौसी, वे सब क्यों इतने रुष्ट हो रहे हैं ? क्यों कहते हैं कि युवराज ने अन्याय किया है—मैं यह समझ भी नहीं सकती, सह भी नहीं सकती।

२

उत्तरकूट में रहकर तू यह भी न समझ सकी ? उन्होंने नंदिसंकट का मार्ग खोल दिया है।

१

तो इसमें अपराध क्या हुआ, मेरी समझ में नहीं आता। मैं किसी प्रकार भी विश्वास नहीं करती कि युवराज ने अन्याय किया है।

२

तू अभी नादान है। अनेक दुख उठाने के बाद समझेगी कि बाहर से जो लोग भले जान पड़ते हैं, वे अधिक संदेह के पात्र होते हैं।

१

किन्तु युवराज पर तुम सब क्या संदेह करती हो ?

२

सभी तो कहते हैं कि शिवतराई के लोगों को वश में करके वह उत्तरकूट का सिंहासन छीना चाहते हैं,—वे अधिक विलम्ब नहीं सह सकते।

१

उनको सिंहासन की क्या आवश्यकता थी ! उन्होंने तो सभी का हृदय जीत लिया है। जो लोग उनकी निंदा करते हैं उनका तो विश्वास करूं और युवराज का विश्वास न करूं ?

२

चुप रह। अभी तेरी वयस क्या है, कल की छोकड़ी, तेरे मुँह से ऐसी बातें शोभा नहीं देतीं। देश भर के लोग जिसकी निंदा करते हैं तू उसीकी—

१

मैं देश भर के लोगों के सामने खड़ी होकर यह बात कह सकती हूँ कि—

२

चुप, चुप।

१

चुप-चुप क्यों? मेरी आंखें फाड़कर आंसू निकलने को उद्यत हो रहे हैं। युवराज पर मेरा सब से अधिक विश्वास है, यह बात प्रकट करने के लिये कुछ करनेकी इच्छा होती है। आज अपने इन लम्बे बालों की भैरव से मनौती मानूँगी, कहूँगी—बाबा, तुम

यह प्रकट कर दो कि युवराज की ही जीत है, जो निन्दक हैं वे झूठे हैं।

२

चुप, चुप, चुप। कहीं कोई सुनता न हो। देखती हूँ, यह लड़की आपदा खड़ी करेगी!

[दोनों का प्रस्थान।

[उत्तरकूट के नागरिकों के एक दल का प्रवेश]

१

हमें दृढ़ रहना चाहिये। चलो, राजा के पास चलें।

२

फल क्या होगा? युवराज तो राजा का हृदयमणि है, उसके अपराध का विचार वे न कर सकेंगे, उल्टा हम लोगों पर बिगड़ेंगे।

१

बिगड़ें, साफ कहूँगा। कपाल में जो है, होगा।

३

इधर तो युवराज हम लोगों से इतना प्रेम दिखलाता है! ऐसा करता है मानो आकाश का चन्द्रमा हाथ पर ला धरेगा और उधर भीतर ही भीतर उसकी यह करतूत! शिवतराई उसके निकट उत्तरकूट से भी बड़ा हो गया!

२

जब ऐसा होने लगा तब पृथ्वी पर अब धर्म कहां रह गया दादा!

३

किसी को पहचानने का उपाय नहीं है!

१

राजा उसको दण्ड न देंगे तो हम लोग देंगे।

२

क्या करोगे ?

१

इस देश में उसके लिये स्थान नहीं है। जो मार्ग उसने खोला है उसी से होकर उसे बाहर निकल जाना होगा।

३

किन्तु अभी चवुआ गांववाले तो कह रहे थे कि वह शिवतराई में नहीं है। और यहां राजमंदिर में भी नहीं है।

२

राजा ने उसे अवश्य छिपा रखा है।

३

छिपा रखा है ? तो दीवाल तोड़कर बाहर निकालेंगे।

१

घर में आग लगाकर बाहर निकालेंगे।

३

हम लोगों को धोखा देंगे? चाहे मर जांय तोभी—

[उद्धव के साथ मन्त्री का प्रवेश]

मंत्री

क्या बात है ?

१

यह लुका-चोरी नहीं चलने की। युवराज को निकालो !

मंत्री

मैं निकालनेवाला कौन ?

२

तुम्हीं ने तो मंत्रणा देकर उसे—निकाल न सकोगे, किंतु, हम लोग बलपूर्वक बाहर निकालेंगे।

मंत्री

अच्छा, तब अपने ही हाथ में राजत्व लो और राजा को कारागार से निकाल लाओ!

३

कारागार से?

मंत्री

हाँ, महाराज ने उन्हें कैद कर लिया है।

सब

महाराज की जय, उत्तरकूट को जय!

२

चलो जी, हम लोग कारागार चलें और वहाँ जाकर—

मंत्री

जाकर क्या करोगे?

२

विभूति की उतारी हुई माला लेकर फूल फेंक देंगे और डोरी युवराज के गले में झुला आवेंगे।

३

गले में क्यों, हाथ में। बाँध बाँधने के सम्मान की जूँठन से मार्ग काटनेवाले हाथों में बन्धन पड़ना चाहिये।

मंत्री

युवराज ने नन्दिदुर्ग तोड़कर मार्ग खोल दिया, यह

अपराध हुआ; और तुम लोग जो राज्य-व्यवस्था तोड़ोगे वह अपराध न होगा ?

१

यह दूसरी बात है।

३

अच्छा, हम व्यवस्था ही भंग करें तो ?

मंत्री

पाँवतले की धरती मनोनुकूल नहीं है—मानकर शून्य में फाँद पड़ना होगा। किन्तु कहे देता हूँ, वह भी मनोनुकूल न होगा। नई व्यवस्था की रचना करने के बाद पुरानी व्यवस्था तोड़ी जाती है।

२

अच्छा, तो कारागार को छोड़ो। चलो, राज-मंदिर के सामने खड़े होकर महराज की जयध्वनि कर आवें।

३

ए भाई, वह देखो ! सूर्य अस्त हो रहा है, आकाश अँधेरा हो चला, किंतु विभूति के यंत्र का चूड़ा अभी तक प्रज्वलित हो रहा है, मानो किरणों की सुरा पीकर लाल हो रहा है।

२

और भैरव-मंदिर के त्रिशूल को अस्तमान सूर्य का आलोक मानो डूबने के भय से चिपट कर पकड़े हुए है। कुछ ऐसा दिखलाई पड़ता है—जो कहा नहीं कह जाता।

[नागरिकों का प्रस्थान।

मंत्री

महाराज ने युवराज को इस शिविर में क्यों वंदी करने को कहा था, अब समझ में आया।

उद्धव

क्यों ?

मंत्री

प्रजा के हाथ से उन्हें बचाने के लिए। किन्तु रंग अच्छे नहीं हैं। लोगों की उत्तेजना बढ़ती ही जाती है।

[संजय का प्रवेश]

संजय

महाराज से अधिक आग्रह करने का साहस न कर सका क्योंकि इससे उनका संकल्प और भी दृढ़ हो जाता।

मंत्री

राजकुमार, शान्त रहिये ! उत्पात को अधिक जटिल न बनाइये।

संजय

विद्रोह करके मैं भी वन्दी होना चाहता हूँ।

मंत्री

सकी अपेक्षा मुक्त रहकर बंधन खोलने की चेष्टा कीजिये

संजय

इसी चेष्टा में मैं जनता से मिला था। समझता था कि युवराज को वे प्राण से भी अधिक प्यार करते हैं;—उनका वन्दी होना वे सहन न कर सकेंगे। किन्तु, जाकर देखा कि नन्दिघाटी को खबर पाकर वे आग हो रहे हैं !

मंत्री

अब आप ने समझा होगा कि युवराज कारागार में ही निरापद हैं।

संजय

मैं बालपन से उनका अनुयायी हूं। कारागार में भी मुझे उनका अनुसरण करने दो।

मंत्री

इससे लाभ ?

संजय

जगतीतल में प्रत्येक मनुष्य अपूर्ण है, किसी दूसरे से मिलकर ही वह पूर्णता प्राप्त करता है। युवराज के साथ मेरा वैसा ही संयोग है।

मंत्री

राजकुमार, यह मैं मानता हूं। किंतु जहाँ इस सत्व का मिलन होता है, वहाँ साथ साथ रहने की आवश्यकता नहीं होती। आकाश का मेघ और समुद्र का जल—दोनों वास्तव में एक हैं, इसीलिए वे बाहर अलग रहकर भी एकत्व को सार्थक करते हैं। युवराज आज जहाँ नहीं हैं, वहीं वह तुम्हारे द्वारा प्रकट हो रहे हैं।

संजय

मन्त्री, ये बातें तो तम्हारी निज की सी बातें नहीं जान पड़तीं, यह बातें तो—मानों युवराज के मुंह की बातें हैं।

मंत्री

युवराज की बातें यहाँ के वायमण्डल में व्याप्त हैं। उन्हें

व्यवहार में लाता हूं, भूल जाता हूँ कि यह उनकी हैं या मेरी।

संजय

यह बात मेरे मन में जाग्रत कर दी, अच्छा किया। दूर रह कर उन्हीं का कार्य करूंगा। महाराज के पास जाता हूं।

मंत्री

किसलिये?

संजय

शिवतराई का शासनाधिकार पाने की प्रार्थना करूंगा।

मंत्री

बड़े संकट का समय है, इस समय क्या—

संजय

इसी कारण तो यह उपयुक्त समय है।

[दोनों का प्रस्थान।

[विश्वजित का प्रवेश]

विश्वजि

कौन है, उद्धव?

उद्धव

हाँ, काका महाराज।

विश्वजित

मैं अँधेरे की राह देख रहा था। मेरी चिट्ठी मिल गई है! न?

उद्धव

मिल गई है।

विश्वजित

उसी के अनुसार काम हुआ है न ?

उद्धव

अभी, थोड़ी ही देर में सब प्रकट हो जायगा, किन्तु—

विश्वजित

मन में सन्देह न करो। महाराज स्वयं तो उन्हें छोड़ने पर तैयार नहीं हैं किन्तु उनको अज्ञातता में किसी उपाय से कोई दूसरा यह काम कर डाले तो वे बच जाँय।

उद्धव

किन्तु, वे उस दूसरे को किसी प्रकार भी क्षमा न करेंगे।

विश्वजित

मेरी सेना प्रस्तुत है। वह तुम्हें और तुम्हारे पहरेदारों को कैद कर ले जायगी। दायित्व मेरे ऊपर रहा।

नेपथ्य में—

आग ! आग !!

उद्धव

वह देखिये, वन्दीशाला से सटे हुए पाकशाला के तम्बू में आग लग गई। जाऊँ, इसी सुयोग में दोनों वन्दियों को मुक्त कर दूँ।

[कुछ क्षण पश्चात् अभिजित का प्रवेश।

अभिजित

अरे यह तो महाराज बाबा हैं !

विश्वजित

तुमको वन्दी करने आया हूँ। मोहनगढ़ जाना होगा।

अभिजित

आज मुझे आप किसी प्रकार भी वन्दी न कर सकेंगे, न क्रोध से न स्नेह से। आप लोग समझ रहे हैं कि पाठशाला के तंबू में आपही लोगों ने आग लगाई है ! पर नहीं, यह आग जैसे भी हो, लगती ही। आज मुझे वन्दी रहने का अवकाश नहीं है

विश्वजित

क्यों बेटा, आज तुम्हें कौन सा काम है ?

अभिजित

जन्मकाल का ऋण चुकाना है। स्रोत का पथ मेरी धात्री है, उसका बन्धन मोचन करूँगा।

विश्वजित

इसके लिए बहुत समय है, आज नहीं।

अभिजित

वह समय यही है, ऐसा समय फिर आयेगा या नहीं, कौन जाने।

विश्वजित

हम लोग भी तुम्हारा साथ देंगे।

अभिजित

नहीं, सब के लिए एक ही काम नहीं है,मुझ पर जो काम है वह अकेला मेरा है।

विश्वजित

शिवतराई के तुम्हारे भक्तगण तुम्हारे काम में हाथ बँटाने कीबाट देख रहे हैं, उन्हें न बुलाओगे ?

अभिजित

जो पुकार मैंने सुनी है वही पुकार यदि उन्होंने भी सुनी होती तो मेरे लिये वे ठहरे न रहते। मेरे बुलाने से वे मार्ग भूल जायँगे।

विश्वजित

बेटा, अंधकार हो आया है।

अभिजित

जहाँ से पुकार आई है वहीं से प्रकाश भी आवेगा।

विश्वजित

तुम्हें रोक सकूँ, यह शक्ति मुझ में नहीं है। अन्धकार में तुम अकेले जा रहे हो तो भी तुम्हें छोड़कर लौटना ही होगा। केवल यह भरोसा दिये जाओ कि फिर भेंट होगी।

अभिजित

आप से मेरा विच्छेद नहीं हो सकता, यह बात याद रखिये।

[दोनों का भिन्न भिन्न मार्गों पर प्रस्थान।

[धनञ्जय का प्रवेश]

गान *

अग्निदेव, तव जय ! जय !
बंधन-हर ऐसी रंजित छवि लखी न किसी समय।

---

* आगुन, आमार भाई,
आमि तोमारि जय गाई।

दोनों हाथ नचा कर कैसे गाने में तन्मय !
बलिहारी यह नृत्य तुम्हारा अति सानंद अभय।
जब मियाद पूरेगा मेरे भव-बंधन का; भय—
छूटेगा; हथकड़ी बेड़ियाँ कर दोगे तुम क्षय।
अंक तुम्हारे नाचेगा मम अङ्ग सताल सलय,
दाह दग्ध हो मिट जायेगा, छूटेंगे आमय।

(बटुक का प्रवेश)

बटुक

बाबा, दिन तो अस्त हो गया, अँधेरा हो आया।

धनञ्जय

बाहरी आलोक पर भरोसा रखने का अभ्यास पड़ रहा है इसीलिए अँधेरा होते ही सब एकबारगी अंधकारमय दिखलाई पड़ने लगा।

तोमर शिकल-भांगा एमन रांगा
मूर्त्ति देखि नाइ।
दुहात तुले आकाश पाने
मेतेछ आज किसेर गाने ?
एकि आनन्दमय नृत्य अभय
बलिहारि जाइ।
जेदिन भवेर मेयाद फुरोबे, भाइ,
आगल जाबे सरे'
सेदिन हातेर दड़ि पायेर दड़ि
दिबि रे छाइ करे'।
सेदिन आमार अंग तोमार अंगे
ए नाचने नाचबे रंगे,
सकल दाह मिटबे दाहे,
घुचबे सब बालाइ।

बटुक

सोचा था कि भैरव का नृत्य आज ही आरम्भ होगा, किन्तु होता नहीं दीखता। यन्त्रराज ने क्या उनके भी हाथ पैर यन्त्र से बाँध दिये ?

धनञ्जय

भैरव का नृत्य जिस समय आरम्भ होता है, उस समय दृष्टिगत नहीं होता। जब समाप्ति की बेला आती है तब प्रकट हो पड़ता है।

बटुक

ढाढ़स दो बाबा, बड़े भारी भय ने धर दबाया है।—जागो, भैरव, जागो! आलोक बुझ गया है, पथ छिप गया है। शब्द तक नहीं सुन पड़ता मृत्युञ्जय! भय को भयभीत करके भगाओ! जागो, भैरव, जागो!

[प्रस्थान।

[उत्तरकूट के नागरिक दल का प्रवेश]

१

झूठ बात है! राजधानी के कारागार में वह नहीं है। उसे छिपा रखा है।

२

देखेंगे कहाँ छिपा रखते हैं!

धनञ्जय

नहीं बाबा, उसे छिपाकर कहीं न रख सकेंगे। दीवालें गिर जावँगी, द्वार टूट जावँगे, आलोक फूट कर बाहर आ जायगा—सब प्रकाशित हो जायगा।

१

अरे, यह कौन है ? एक दम चौंका दिया।

२

अच्छा हुआ। कोई एक तो चाहिये ही। इस बैरागी ही को पकड़ कर बाँधो।

धनञ्जय

जो अपने को स्वयं पकड़वा बैठा है—उसे क्या पकड़ोगे ?

१

साधुपना रहने दो, हमलोग यह सब नहीं मानते।

धनञ्जय

न मानना ही तो अच्छा है। भगवान स्वयं हाथ पकड़कर तुम लोगों से मनवा लेंगे। तुम लोग भाग्यवान हो। मैं ऐसे अभागों को जानता हूँ जिन्होंने केवल मान मान कर ही गुरु को गवाँ दिया।

१

उनका गुरु कौन है ?

धनञ्जय

जिसके हाथ से वे मार खाते हैं।

१

तब तुम्हारे ही ऊपर हम लोग गुरुआई क्यों न आरम्भ करें ?

धनञ्जय

राजी हूँ भाई। देखता हूं ठीक से पाठ सुनाता हूँ या नहीं। लो परीक्षा।

२

सन्देह होता है कि तुम्हीं ने हमारे युवराज को लेकर कुछ तिकड़म किया है।

धनञ्जय

तुम्हारे युवराज मुझ से भी चालाक हैं, उनकी चालाकी मेरे ही साथ होती है।

२

देखा ? इसका अर्थ है ! दोनों ने मिलकर चाल चली है।

१

नहीं तो इतनी रात में यहाँ घूमा-फेरी क्यों ? युवराज को शिवतराई ले जाने की चेष्टा है। इसे यहीं बाँधकर डाल दो। युवराज का पता लगने पर इसे भी समझ लेंगे। अरे कुंदन, बाँध न इसे, रस्सी तो तेरे पास है ?

कुंदन

यह लो रस्सी, तुम्हीं न बाँधो।

२

क्योंरे, तू क्या उत्तरकूट का मनुष्य है ! दे, मुझे दे। (बाँधते बाँधते) क्यों, कहो, गुरु क्या कहते हैं ?

धनञ्जय

कस कर पकड़ा है, सहज में छोड़नेवाले नहीं।

[भैरव-पन्थियों का प्रवेश]

गान

तिमिर-हृद्विदारण
ज्वलदग्नि-निदारुण!

मरुश्मशान-सञ्चर,
शङ्कर शङ्कर ।

वज्रघोष-वाणी
रुद्र शूल-पाणि,
मृत्यु--सिंधु--सन्तर
शङ्कर, शङ्कर ।

[प्रस्थान ।

कुंदन

ध्यान देकर देखो। गोधूलि का आलोक जितना ही घटता जाता है हम लोगों के यंत्र की चूड़ा उतना ही काला पड़ता जाता है।

१

दिन के समय वह सूर्य से प्रतियोगिता करता रहा है, अंधकार में अब वह रात्रि की कालिमा से टक्कर लेने चला है । कैसा भूत सा दिखलाई पड़ता है !

कुंदन

विभूति ने अपनी कीर्ति को इस रूप में क्यों गढ़ा ? उत्तरकूट में चाहे जिधर जायँ, उस पर दृष्टि पड़े बिना नहीं रहती, यह मानो एक विकट चीत्कार के समान है।

[चौथे नागरिक का प्रवेश]

४

खबर मिली है कि इस आम के बगीचे के पीछे राजा का शिविर है, उसीमें युवराज को रखा गया है।

२

अब समझ में आया। इसीलिये वैरागी इस पथ पर घूम रहा था। इसे यहीं बँधा पड़ा रहने दो। तब तक मैं उधर जाकर देखे आता हूँ।

[प्रस्थान।

धनञ्जय

गान ※

गुनी हो, देखो तनिक विचार ॥
अभिलाषा क्या पूरित होगी केवल बाँधे तार ?
क्या यह वीणा कसी हुई यों पड़ी रहे बेकार ? गुनी हो० ॥
हाथ लगी, ऐसा होने से, तुझ को भारी हार।
बाँध बूँध देने से केवल मिलता है क्या सार ? गुनी हो० ॥
इस बन्धन में हाथ लगे तो कढ़े मधुर झङ्कार।
नहीं, धूल में पड़ कर लज्जित होगी यह बेकार ॥ गुनी हो० ॥

※ शुधु कि तार बेँधेइ तोर काज फुराबे,
गुणी मोर, ओ गुणी ?
बांधा वीणा रइबे पड़े'
गुणी मोर, ओ गुणी ?
ताह'ले हार ह'ल जे हार ह'ल
शुधु बांधाबाँधिइ सार ह'ल
गुणी मोर ओ गुणी !
बाँधने यदि तोमार हात लागे,
ताह'लेइ सुर जागे,
गुणी मार, ओ गुणी !
ना हले धूलाय पड़े' लाज कुड़ाबे।

[नागरिकों का पुनः प्रवेश]

१

यह क्या काण्ड हुआ ?

२

काका महाराज युवराज को सब पहरेदारों समेत मोहनगढ़ ले गये ! इसका क्या तात्पर्य ?

कुन्दन

उनकी नसों में भी तो उत्तरकूट का रक्त है। कहीं युवराज का यहाँ उचित विचार न हो—इसीलिये बलपूर्वक उन्हें बन्दी करके ले गये हैं।

१

घोर अन्याय। इसीको अत्याचार कहते हैं ! अपने युवराज को हम लोग दण्ड न दे सकेंगे ?

२

इसका उचित विधान हो रहा है—समझे, भाई—

१

हाँ, हाँ, उनकी वह सोने की खान—

कुन्दन

और उनकी गोशाला में कुछ न होंगे तो पचीस हज़ार गोरू होंगे।

१

वह तो सब होगा ही। किन्तु यह अन्याय तो—

३

और उनके वह केसर के खेत, उनमें वर्ष में कम से कम—

२

हाँ, हाँ, वह दण्ड तो उन्हें देना ही होगा। किंतु इस समय इस वैरागी को क्या करें ?

१

इसे यहीं पड़ा रहने दो।

[प्रस्थान।

धनञ्जय

गान*

ऐ अबोध दे फेंक किंतु क्या पड़ा रहेगा ?
देखेगा जौहरी कभी तो झट ले लेगा।
अज्ञ ! रत्न यह कितना सुंदर अनुपम न्यारा !
उचित मिलाना इसे धूल में ?—कभी विचारा ?

---

* फेले राखलेइ कि पड़े र'बे ? (ओ अबोध)
जे तार दाम जाने से कुड़िये लबे। (ओ अबोध)
ओजे कोन् रतन ता देखना भावि,
घोर परे कि धूलोर दाबी ?
ओ हारिये गेले ताँरि गलार
हार गाँथा जे व्यर्थ हबे।
ओर खोंज पड़े चे जानिस् ने तो ?
ताइ दूत बेरल हेथा सेथा।
जारे कर्‌लि हेला सबाइ मिलि,
आदर जे तार बाड़िये दिलि,
जारे दरद दिलि, तार व्यथा कि
सेइ दरदीर प्राणे स'बे ?

खो देगा सन तू कहीं, इसे समझ बेकार जो।
करुणाकर के लिये है, व्यर्थ गूँथना हार तो॥

नहीं जानता होती इसकी खोज वहाँ है?
दौड़ पड़ा सब ओर दूतदल जहाँ तहाँ है।
तुम लोगों ने इसे किया जितना अपमानित।
उतना ही सम्मान बढ़ा है इसका नित नित।

दारुण दुख जिसको दिया, उसका करुणकलाप सुन,
करुणाकर क्या सकेंगे कभी भला चुपचाप सुन॥

[कुन्दन का पुनः प्रवेश]

कुंदन

लाओ बाबा, तुम्हारा बंधन खोल दें—अपराध पर ध्यान न देना। तुम तुरन्त घर भाग जाओ। क्या जानें रात में—

धनञ्जय

क्या जानें आज रात में यदि पुकार हो पड़े, इसी लिये घर भाग जाने का अवसर नहीं है।

कुंदन

यहाँ तुम्हारी पुकार क्यों होने लगी?

धनञ्जय

होगी, उत्सव के अंत में।

कुन्दन

तुम शिवतराई के निवासी होकर उत्तरकूट के—

धनञ्जय

भैरव के उत्सव में अब केवल शिवतराई की ही आरती शेष है।

नेपथ्य में

जागो, भैरव, जागो !

कुन्दन

रङ्ग ढङ्ग अच्छे नहीं दीखते । जाता हूँ ।

[दोनों का प्रस्थान ।

[उत्तरकूट के दो राजदूतों का प्रवेश]

१

अब किधर जाऊँ ? नौसानू में जो बकरियों का चरवाहा मिला था वह तो कहता था, युवराज को इसी मार्ग में अकेले पछाँह की ओर जाते देखा है ।

२

आज रात को उन्हें खोज ही निकालना होगा, महाराज का हुक्म ठहरा !

१

कहा जाता है कि उन्हें मोहनगढ़ ले गये । किन्तु अम्बा पगली के कहने से स्पष्ट जान पड़ता है कि उसने जिसे देखा है वह हमारे युवराज ही हैं—और वे इसी मार्ग से गये हैं ।

२

किन्तु, इस अँधेरे में वे अकेले कहाँ जायँगे, समझ में नहीं आता ।

१

उजेले बिना हम लोग तो अब एक पैर भी आगे न बढ़ सकेंगे । चलो कोटपाल के पास से मशाल माँग लावें ।

[दोनों का प्रस्थान ।

(एक पथिक का प्रवेश)

पथिक

(चिल्लाकर) अरे बुद्ध...न्, शम्भू...ऊ ! विपद में फँसा दिया, मुझे आगे कर दिया ! कहा था, चढ़ाई के पास सीधे आ मिलेंगे। कोई नहीं देख पड़ता। अँधेरे में यह काला यंत्र भूत सा खड़ा है, भय लगता है। कौन आता है ? कौन हो भाई ? बोलते क्यों नहीं ? बुद्धन् हो क्या ?

२ पथिक

मैं हूँ निमकू मशालची। राजधानी में आज समस्त रात प्रकाश किया जायगा, मशालों की आवश्यकता है। तुम कौन हो ?

१ पथिक

मेरा नाम हुब्बा है। कथिक हूँ। राह में अन्दू की मण्डली तो नहीं मिली थी ?

निमकू

न जाने कितने लोग आ-जा रहे हैं, किसको पहचानूँ ?

हुब्बा

हमारे अन्दू को ऐसे वैसे आदमियों में मत गिनो। वह पूरा आदमी है। भीड़ में से उसे खोज निकालने की आवश्यकता नहीं होती—सबके ऊपर वह दिखाई देता है। भाई, तुम्हारी इस झोली में जान पड़ता है, बहुत सी मशालें हैं, एक मुझे भी दो। घर में रहनेवालों की अपेक्षा राह चलनेवालों को मशालों की अधिक आवश्यकता है।

निमकू

दाम क्या दोगे ?

हुब्बा

दाम हो यदि दे सकता तो तुमसे डाँट के साथ बातें न करता, ऐसा मीठा सुर क्यों निकालता ?

निमकू

बड़े रसिक हो !

[प्रस्थान ।

हुब्बा

मशाल तो दी नहीं; पर, रसिक हूँ यह पहचान लिया। रसिक का गुण ही यह है कि घोर अन्धकार में भी वह पहचाना जाता है ।—ओह झींगुरों के शब्द से आकाश झनझना रहा है । हाँ, मशालची के साथ रसिकता न करके डकैती की जाती तो अच्छा होता ।

[भरती करने वाले का प्रवेश]

भरतीवाला

हेइ ......यो ! (डाँटकर)

हुब्बा

ऐसे क्यों डरवाते हो ?

भरतीवाला

अभी चलो !

हुब्बा

चलने के ही विचार से तो निकला था, किन्तु साथ के लोगों को छोड़कर चलते चलते किस प्रकार अचल हो जाना पड़ता है-मन ही मन इस का निष्कर्ष निकालने की चेष्टा कर रहा हूँ ।

भरतीवाला

के लोग तैयार हैं बस तुम्हारे मिलने भर की देर है ।

हुब्बा

क्या कहा ? मैं तिमुहानी का रहने वाला हूँ। हम लोगों की यह बुरी टेव है कि बात स्पष्ट न कहने से समझ नहीं सकते। दल के लोग तुम किसको कहते हो ?

भरतीवाला

हम लोग चबुआ गाँव के हैं। स्पष्ट समझाने की बुरी टेंव में हमारा हाथ पक्का हो रहा है। (घेंचा लगाकर) अब तो समझा ?

हुब्बा

बप्पारे, समझा ! इसका स्पष्ट अर्थ यह हुआ कि इच्छा हो चाहे न हो, चलना ही पड़ेगा। कहाँ चलूँ ? अब जरा नरमी से बताना। तुम्हारे बतलाने के पहले ही ढँग से मेरी बुद्धि ठिकाने आ गई है।

भरतीवाला

शिवतराई चलना होगा।

हुब्बा

शिवतराई ? इस अमावस की रात में ? वहाँ कौन सा खेल है ?

भरतीवाला

नन्दिसंकट के टूटे गढ़ को फिर बनाने का—

हुब्बा

टूटा गढ़ मुझ से बनवाओगे ? भाई, अँधेरे में मेरा चेहरा नहीं देख पाते इसी से तुमने ऐसी कठोर बात कही है। मैं हूँ—

भरतीवाला

तुम चाहे जो हो। दो हाथ तो हैं ?

हुब्बा

नहीं हैं—यह तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु क्या तुम इन्हें—

भरतीवाला

हाथों का परिचय मुंह की बातों से नहीं होता, मौके पर हो जायगा, चलो।

[दूसरे भरतीवाले का प्रवेश]

२ भरतीवाला

यह एक आदमी और हाथ लगा, कंकर।

कंकर

यह कौन है ?

३

कोई नहीं, मैं हूँ लछमन, उत्तरभैरव के मन्दिर का घण्टा बजानेवाला।

कंकर

यह और अच्छी बात है, हाथ मजबूत होंगे। चल शिवतराई।

लछमन

चलूं तो, किन्तु मन्दिर का घण्टा—

कंकर

भैरवबाबा अपना घण्टा आप बजा लेंगे।

लछमन

दोहाई, मेरी स्त्री बीमार पड़ी है !

कङ्कर

तुम्हारे जाने पर भी वह या तो अच्छी हो जायगी या मर जायगी; तुम्हारे रहने पर भी ठीक यही होगा।

हुब्बा

भाई लछमन, चुपचाप मान जाव। चलना तो विपत्ति है ही, किन्तु आपत्ति करने में भी कम विपत्ति नहीं; मुझे इस का थोड़ा सा आभास मिल चुका है।

कङ्कर

अरे,यह तो नरसिंह का बोल सुन पड़ता है। क्यों नरसिंह, समाचार अच्छे तो हैं ?

[कई आदमियों को लिये हुए नरसिंह का प्रवेश]

नरसिंह

यह देखो, दल जुटा लाया। और भी कई दल पहले रवाना हो चुके हैं।

कङ्कर

तो अब चलो चलें, मार्ग में और भी आदमी मिल जायँगे।

दल का एक आदमी

नहीं जाऊँगा।

कङ्कर

क्यों नहीं जायगा ? क्या बात है ?

वही आदमी

बात कोई नहीं, मैं नहीं जाऊँगा।

कङ्कर

नरसिंह, इसका क्या नाम है ?

नरसिंह

इसका नाम बनवारी है, कमलगट्टे की मालायें बनाया करता है।

कङ्कर

अच्छा, इस से ज़रा निपट लूँ ! बोल, क्यों नहीं जायगा ?

बनवारी

नहीं जाना चाहता। शिवतराई के लोगों से मेरा कोई झगड़ा नहीं है; वे हमारे शत्रु नहीं हैं।

कङ्कर

अच्छा, मान लो हम हीं उनके शत्रु हुए, तब भी तो एक कर्त्तव्य है ?

बनवारी

मैं अन्याय नहीं कर सकता।

कङ्कर

न्याय अन्याय के विचार करने की स्वतंत्रता जहाँ है वहीं अन्याय अन्याय है। उत्तरकूट विराट है, उसके अंश रूप से तुम्हारे द्वारा जो कार्य होगा उसका दायित्व तुम्हारे ऊपर नहीं है।

बनवारी

उत्तरकूट से भी परे एक विराट है, उसका जैसे उत्तरकूट अंश है, वैसे ही शिवतराई भी है।

कङ्कर

नरसिंह, यह तो तर्क करता है। देश के लिये इससे बढ़कर और कोई सङ्कट नहीं है।

नरसिंह

कठोर काम में लगा देने से सब तर्क निकल जायगा! इसीलिये इसे खींचे लिये चलता हूँ।

बनवारी

तुम्हारे लिये भार हो जाऊँगा। तुम मुझे किसी काम में न लगा सकोगे।

कङ्कर

तू उत्तरकूट का भार है। तुझे दुरुस्त करने का उपाय खोजता हूँ!

हुब्बा

बनवारी भाई, तुम सब बातों को सोच विचार कर मानना चाहते हो, इसीलिये जो बिना समझाये मनवाना चाहते हैं उनसे तुम्हारी खटपट हो रही है। हो सके तो उनका ढङ्ग अपना लो, नहीं तो अपना ढङ्ग छोड़ कर चुप हो रहो।

बनवारी

तुम्हारा ढङ्ग क्या है?

हुब्बा

देखो, मैं गीत गाया करता हूँ। पर वह यहाँ काम न देगा इसलिये चुप हूँ, नहीं तो अब तक मैंने एक तान छेड़ दी होती।

कङ्कर

(बनवारी से) बोलो, तुम चाहते क्या हो?

बनवारी

मैं एक डग भी आगे न धरूँगा।

कङ्कर

तब हमीं लोग तुम को आगे बढ़ावेंगे। बाँध लो इसे !

हुब्बा

एक बात कहता हूँ कङ्कर भाई, क्रोध न करना। इसको घसीट कर ले जाने में जो शक्ति लगाओगे उसे यदि सुरक्षित रखो तो बड़ा काम देगी।

कङ्कर

उत्तरकूट की सेवा करना जो नहीं चाहते उनका दमन करना भी हमारा एक कर्त्तव्य है, यह हम नहीं भूल सकते। समझे ?

हुब्बा

हूँ, अभी समझ चुका हूँ !

[नरसिंह और कंकर को छोड़ कर सबका प्रस्थान]

नरसिंह

यह तो विभूति आ रहा है। यन्त्रराज विभूति की जय !

[विभूति का प्रवेश]

कङ्कर

बहुत काम हो गया, खूब आदमी मिल गये। पर, तुम यहाँ कैसे ? वहाँ उत्सव में सब लोग तुम्हारी राह देख रहे हैं।

विभूति

उत्सव के लिये मेरे हृदय में उत्साह नहीं रहा।

नरसिंह

क्यों, क्या हुआ ?

विभूति

मेरी कीर्ति को भङ्ग करने के लिये नन्दि-सङ्कट-दुर्ग को तोड़ने की खबर ठीक आज आ पहुँची है ! मेरे साथ प्रतियोगिता चल रही है !

कङ्कर

किसकी प्रतियोगिता यन्त्रराज ?

विभूति

नाम नहीं लेना चाहता, सभी जानते हैं । उत्तरकूट में किसका अधिक आदर होगा, उनका या मेरा, यह समस्या सामने आ खड़ी हुई है । एक बात तुम लोग नहीं जानते, इसी बीच में मेरे पास, मुझे हतोत्साह करने के लिये उधर से दूत आया था; मुक्तधारा बाँध तोड़ दिया जायगा, यह धमकी भी वह दे गया ।

नरसिंह

हाँ-ाँ-?

कङ्कर

और तुमने सह लिया विभूति ?

विभूति

प्रलाप का प्रतिवाद नहीं होता ।

कङ्कर

किंतु विभूति, इतनी उपेक्षा क्या उचित है ? तुम्हीं ने ता

कहा था कि बाँध का जोड़ दो एक जगह कच्चा है। उसका पता पा जाने पर सरलता से—

विभूति

जिसे इसका पता होगा उसे यह भी मालूम होगा कि उसे तोड़ते ही उसका भी निस्तार नहीं है, धारा का वेग उसे तत्काल बहा ले जायगा।

नरसिंह

वहाँ पहरा रखना क्या ठीक न होता ?

विभूति

वहाँ पहरा तो स्वयं यमराज दे रहे हैं। बाँध के लिये कुछ आशङ्का नहीं। यदि एक बार यह नंदिघाटी का मार्ग मैं फिर बंद कर सकता तो मुझे अपने जीवन में कोई खेद न रह जाता।

कङ्कर

तुम्हारे लिये यह क्या कठिन है।

विभूति

कठिन तो नहीं, मसाला सब तैयार ही है। पर, बात यह है कि यह पहाड़ी मार्ग बहुत सङ्कीर्ण है। थोड़े मनुष्य ही सरलता से बाधा दे सकते हैं।

नरसिंह

कहाँ तक बाधा देंगे ? मरते मरते भी चुन देंगे।

विभूति

मरनेवाले बहुत चाहिये।

कङ्कर

मारनेवालों के रहते मरने वालों की कमो नहीं होती ।

नेपथ्य में जागो, भैरव, जागो

[धनञ्जय का प्रवेश]

कङ्कर

यह लो, यात्रा का अशकुन मिल गया !

विभूति

वैरागी, तुम्हारे जैसे साधु भैरव को अब तक न जगा सके ! अब मैं, जिसे तुम पाखण्डो कहते हो, भैरव को जगाने जा रहा हूँ ।

धनञ्जय

मानता हूँ, जगाने का भार तुम्हारे ही ऊपर है ।

विभूति

किंतु यह जगाना तुम्हारी तरह घण्टा हिलाकर, आरती जलाकर जगाना नहीं है ।

धनञ्जय

ठीक है, तुम लोग जञ्जीर से उन्हें जकड़ोगे तब जञ्जीर तोड़ने के लिये वह जागेंगे ।

विभूति

हमारी जञ्जीर कुछ ऐसी वैसी नहीं है, फँसाव पर फँसाव और गाँठों पर गाँठें हैं ।

धनञ्जय

जब असह्य हो उठता है तब उनके जागने का समय आता है ।

[भैरव पंथियों का प्रवेश]

गान

जय भैरव, जय शङ्कर,
जय जय जय प्रलयङ्कर।
जय संशय भेदन,
जय बंधन छेदन,
जय सङ्कट-संहर
शङ्कर, शङ्कर !

[प्रस्थान।

[रणजित और मन्त्री का प्रवेश]

मंत्री

महाराज, शिविर एक दम सूना है, उसका बहुत सा भाग जल गया है। कुछ थोड़े पहरेदार थे, वे भी—

रणजित

वे कहीं हों। मैं जानना चाहता हूँ, अभिजित कहाँ है।

कंकर

महाराज, हम लोग युवराज को दंड देने की प्रार्थना करते हैं।

रणजित

जो दण्ड के योग्य है उसको दण्ड देने में मैं क्या तुम लोगों की राह देखा करता हूँ ?

कङ्कर

उनका पता न मिलने से लोग संदेह करते हैं।

रणजित

क्या ! संदेह ! किस पर ?

कंकर

महाराज, क्षमा करेंगे । प्रजा के मन के भाव आपको जानना चाहिये । युवराज का पता लगाने में जितना ही विलम्ब होता है उतना ही लोग अधिक अधीर होते जा रहे हैं । अधीरता इतनी बढ़ रही है कि जब वह मिलेंगे तब वे लोग दण्ड देने के लिये महाराज की अपेक्षा न करेंगे ।

विभूति

महाराज के आदेश की प्रतीक्षा किये बिना ही हम लोगों ने नंदिसंकट के टूटे गढ़ को फिर से बनाने का भार अपने हाथों में ले लिया है ।

रणजित

मुझ पर क्यों न छोड़ सके ?

विभूति

यह सन्देह करने का हमें अधिकार है कि युवराज ने जो करतूत की है उसमें अप्रत्यक्ष रूप से आप भी सहमत हैं ।

मंत्री

महाराज, आज जनता का मन एक ओर तो आत्मश्लाघा से और दूसरी ओर क्रोध से उत्तेजित हो रहा है । अधीर होकर उनकी अधीरता को और उग्र न बनाइये ।

रणजित

वह कौन खड़ा है,—धनञ्जय ?

धनञ्जय

प्रसन्नता है कि महाराज मुझे नहीं भूले !

रणजित

अभिजित कहाँ है, तुम जानते होगे।

धनञ्जय

नहीं महाराज, जो मैं जानता हूँ उसे छिपाकर नहीं रख सकता और इसीलिये विपद में पड़ता हूँ।

रणजित

तब यहाँ क्या कर रहे हो ?

धनञ्जय

युवराज के प्रगट होने की राह देखता हूँ।

नेपथ्य में

सुमन ! बेटा सुमन ! अँधेरा हो गया, सब अँधेरा हो गया !

रणजित

यह कौन है ?

मंत्री

वही अम्बा पगली।

[अम्बा का प्रवेश]

अम्बा

कहाँ, वह तो न लौटा !

रणजित

उसे क्यों खोजती फिरती है ? समय पूरा हो गया था, भैरव ने उसे बुला लिया।

अम्बा

भैरव क्या केवल बुला ही लेते हैं कभी लौटा नहीं देते—चुपके से? घोर निशा में?—सुमन, बेटा सुमन!

[प्रस्थान।

[गुप्तचर का प्रवेश]

गुप्तचर

शिवतराई की ओर से हजारों आदमी चले आ रहे हैं।

विभूति

यह कैसे? निश्चय तो यह हुआ था कि हम लोग एकाएक पहुँच कर उन्हें निरस्त्र कर देंगे! अवश्य तुम लोगों में से किसी वश्वासघातक ने उनको खबर दी है। कंकर, तुम जैसे कुछ लोगों को छोड़ कर भीतर की बात और तो कोई नहीं जानता। तब यह कैसे—

कङ्कर

विभूति! क्या हम लोगों पर भी सन्देह करते हो?

विभूति

सन्देह की सीमा कहीं नहीं है।

कङ्कर

तब तो हम लोग भी तुम पर सन्देह करते हैं।

विभूति

इस का तुम्हें अधिकार है। किन्तु समय आने पर इसका कुछ निपटारा करना होगा।

रणजित

(चर से) वे किस अभिप्राय से आ रहे हैं, तुम जानते हो?

गुप्तचर

उन लोगों ने सुना है कि युवराज कैद हैं इसीलिये उन्होंने
की है कि जैसे भी हो युवराज को छुड़ा ले जायँगे
और शिवतराई का राजा बनायँगे।

विभूति

हम लोग भी युवराज को खोजते हैं और वे लोग भी खोजते हैं, देखें किसके हाथ लगते हैं।

धनञ्जय

दोनों दलों के हाथ लगेंगे, उनके मन में पक्षपात नहीं है।

गुप्तचर

वह देखो शिवतराई का गणेश सर्दार आ रहा है।

[गणेश का प्रवेश]

गणेश

(धनञ्जय से) बाबा, हम उन्हें पावेंगे तो ?

धनञ्जय

हाँ, पावेंगे।

गणेश

बाबा, निश्चय करके कहो।

धनञ्जय

हां हां, निश्चय पावेंगे।

रणजित

किस को खोजते हो ?

गणेश

अहा, महाराज हैं ! महाराज, उन्हें मुक्त करना होगा।

रणजित

किसको ?

गणेश

हमारे युवराज को। आप उन्हें नहीं चाहते; हम लोग उन्हें चाहते हैं। हमारे जीवन का सब कुछ आप रोक रखेंगे? उन्हें भी ?

धनञ्जय

अब तक नहीं पहचाना, पागल ? उनको रोक रखे, यह सामर्थ्य किसमें है ?

गणेश

हम लोग उन्हें अपना राजा बनाये गे।

धनञ्जय

हाँ, बनायेगा क्या, वह तो स्वयं राजमुकुट पहन कर आवेंगे।

[भैरवपन्थिनों का प्रवेश और गान]

तिमिर हृद्-विदारण,
ज्वलदग्नि-निदारुण,
मरु-श्मशान-सञ्चर,
शङ्कर, शङ्कर !
बज्र-घोष-वाणी,
रुद्र-शूल-पाणि,
मृत्युसिंधु-संतर
शङ्कर, शङ्कर ! !

[प्रस्थान]

नेपथ्य में

माँ पुकारती है, माँ ! लौट आओ, सुमन लौट आओ !

[दूर से एक भयंकर निनाद सुन पड़ा ।]

विभूति

अरे यह क्या ? यह कैसा शब्द ?

धनञ्जय

यह खिलखिलाहट का शब्द है, अंधकार के हृदय का अंतस्तल खिलखिलाकर हँस रहा है ।

विभूति

ओह ! ठहरो सुनने दो, यह भयंकर निनाद किधर से आ रहा है !

नेपथ्य में

जय हो, भैरव जय हो !

विभूति

यह तो स्पष्ट जलस्रोत की ध्वनि है ।

धनञ्जय

नृत्यारम्भ में डमरु की प्रथम ध्वनि है ।

विभूति

ध्वनि का वेग बढ़ता ही जा रहा है ! बढ़ता ही जा रहा है

कङ्कर

जान पड़ता है—

नरसिंह

सचमुच ! जान पड़ता है—

विभूति

हाँ, अब क्या सन्देह रहा ! मुक्तधारा का ही प्रवाह है। बाँध किसने तोड़ा ?—किसने तोड़ा ?—उसका निस्तार नहीं।

[कंकर, नरसिंह और विभूति का द्रुत प्रस्थान।

रणजित

मंत्री, यह क्या काण्ड है ?

धनञ्जय

बाँध तोड़ने के उत्सव की पुकार है।

गान *

बजता है डमरू डम डम,
हृदय लोक के अन्तरतम। बजता०॥

मंत्री

महाराज, मानो—

रणजित

हाँ, यह मानो उल्का—

---

* बाजे रे बाजे डमरु बाजे
हृदय माझे हृदय माझे।
नाचे, रे नाचे चरण नाचे,
प्राणेर काछे, प्राणेर काछे।
प्रहर जागे, प्रहरी जागे,
ताराय ताराय काँपन लागे।
मरमे मरमे वेदना फुटे,
बाँधन टुटे, बाँधन टुटे।

मंत्री

उनके अतिरिक्त और तो किसी का—

रणजित

ऐसा साहस और किसका हो सकता है?

धनञ्जय

प्राणपुरी में नाच रहे हैं,
युगल चरण छम छम। बजता०॥

रणजित

दण्ड देना होगा तो मैं दूंगा। किंतु इस उन्मत्त प्रजा के हाथों से—मेरा अभिजित देवता का प्रिय है। देवता उसकी रक्षा करें।

गणेश

प्रभु! क्या हुआ कुछ समझ में नहीं आता।

धनञ्जय

जागृत निशा, सजग हैं प्रहरी,
तारों में कम्पन। बजता०॥

रणजित

यह पैरों की आहट सी सुन पड़ी! अभिजित, अभिजित!

मंत्री

जान पड़ता है आरहे हैं!

धनञ्जय

बंधन टूटे, क्रंदन फूटे
मेरे मर्म मर्म। बजता०॥

[सञ्जय का प्रवेश]

रणजित

यह तो सञ्जय है। अभिजित कहाँ है ?

सञ्जय

मुक्तधारा का स्रोत उन्हें ले गया, हम लोग उन्हें न पा सके।

रणजित

क्या कहा, कुमार !

सञ्जय

युवराज ने मुक्तधारा का बाँध मुक्त कर दिया।

रणजित

समझा, इसी मुक्ति से वह मुक्ति पा गया। सञ्जय, तुम्हें क्या वह अपने साथ ले गया था ?

सञ्जय

नहीं, पर मैं समझ गया था कि वह वहीं जायँगे। मैं मार्ग में उनकी राह देखता रहा, किंतु वहीं तक--अंत तक न जाने दिया, लौटा दिया।

रणजित

क्या हुआ, और कुछ बताओ।

सञ्जय

बाँध की एक त्रुटि का संधान न जाने किस प्रकार वे पा गये थे। वहाँ उन्होंने यंत्रासुर पर आघात किया। उलट कर यंत्रासुर ने भी प्रत्याघात किया। तुरन्त मुक्तधारा उनकी आहत देह को माता के समान गोद में लेकर चल पड़ी।

गणेश

युवराज को हमलोग खोजने निकले थे, तो क्या अब उन्हें न पायँगे !

धनञ्जय

चिरकाल के लिये पा गये।

[भैरवपन्थियों का प्रवेश]

गान

जय भैरव, जय शंकर,
जय जय जय प्रलयंकर,
जय संशय-भेदन,
जय बंधन-छेदन,
जय संकट-संहर,
शङ्कर, शङ्कर !
तिमिर-हृद्-विदारण
ज्वलदग्नि-निदारुण,
मरु-श्मशान-सञ्चर,
शंकर, शंकर !
वज्रघोष-वाणी,
रुद्र, शूल-पाणि,
मृत्यु-सिंधु-संतर,
शंकर, शंकर !!

प्रकाश पुस्तक माला

उक्त पुस्तक-माला हिन्दी संसार के गौरव की वस्तु है। १) एक रु० प्रवेश फीस देकर माला के स्थायी ग्राहक हो जाने वालों को माला की सभी पुस्तकें पौने मूल्य में मिलती हैं। माला में प्रकाशित पिछली पुस्तकें लेना न लेना ग्राहक की इच्छा पर है किन्तु भविष्य में प्रकाशित होने वाली सभी पुस्तकें लेना आवश्यक है। माला के अतिरिक्त दूसरे प्रकाशकों की पुस्तकों पर भी ५) रु० से ऊपर का आर्डर होने पर, हम स्थायी ग्राहकों को एक आना फी रु० कमीशन सदा देते रहेंगे। तुरंत प्रवेश फीस भेज कर माला के स्थायी ग्राहक बनिए। हमारे यहां हिंदी के सभी अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें सदा मिला करती हैं। सूची पत्र मुफ्त भेजा जाता है।

[माला में प्रकाशित उपन्यास]

गोरा (कविवर रवींद्र नाथ ठाकुर) ८२० पृष्ठ ३)

घर और बाहर, ३००,, १)

महारज नंदकुमार को फाँसी २॥)

बलिदान (ह्यूगो) सचित्र २)

वज्राघात (आपटे) २॥)

जर्मन जासूस की रामकहानी ।-)

युद्ध की कहानियाँ ।)

[माला के कुछ जीवनचरित्र]

सम्राट अशोक (सचित्र) १)

चेतसिंह और काशी का विद्रोह ।=)

श्रीकृष्ण चरित्र ।=)

रूस का राहु (रासपुटिन ।=)

उद्योगी पुरुष ।=)

देवीजोन ।=)

पता—प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर

दूसरे पृष्ठ पर देखिए

रा[illegible] [illegible]॥

[माला की राजनैतिक पुस्तक]

भारतीय सम्पत्ति शास्त्र (सजिल्द) ५)

टाल्सटाय के सिद्धांत १।)

रूस की राज्यक्रांति (सचित्र, सजिल्द) २॥)

चीन की राज्यक्रांति (सजिल्द) १॥)

एशिया निवासियोंके प्रति यूरोपियनों का बर्ताव (सचित्र) ।=)

भारत के देशी राष्ट्र ।॥)

फिजी में प्रतिज्ञाबद्ध कुली प्रथा (सजि०) १)

साम्यवाद ।=)

मेरे जेलके अनुभव[गांधी]।=)

फिजी द्वीप में मेरे २१वर्ष॥)

भारतीय इतिहास में स्वराज्य की गूँज ।=)

कांग्रेस का इतिहास ॥-)

आयरलैण्ड में होमरूल ॥)

आयरलैण्ड में मातृभाषा ।=)

बीसवी सदी का महाभारत ।॥)

राजनीति प्रवेशिका ।=)

स्वराज्य पर मालवीयजी ।)

स्वराज्य पर सर रवींद्र ।)

[illegible]म्प[illegible] ।-)

कलकत्ते में स्व[illegible] का धूम ।)

[माला के काव्य ग्रंथ]

राष्ट्रीय वीणा भाग १ ॥=)

राष्ट्रीय वीणा भाग २ ॥)

त्रिशूल तरङ्ग [त्रिशूल]॥=)

सती सारंधा [सचित्र]॥=)

कृषक क्रंदन [सनेही] ≡)

कुसुमाञ्जलि-[,,] =)

[माला के नाटक]

मुक्तधारा (ले०कविवर रवींद्र नाथ ठाकुर) १)

कृष्णार्जुन युद्ध नाटक ॥=)

भीष्म नाटक ॥)

[माला की सामाजिक पुस्तकें]

वहिष्कृत भारत ।)

हमारा भीषण ह्रास अर्थात हिंदुओ सावधान ।)

[माला की फुटकर पुस्तकें]

बंदेमातरम चित्राधार (सचित्र, सजिल्द) २)

मेघनादवध [माइकेल] ।॥)

शिक्षा सुधार [शिक्षा] ॥)

सितार शिक्षक ।=)

राजयोग [विवेकानंद) ।=)

प्रकाश-पुस्तक माला में विद्वानों द्वारा लिखित कई नई पुस्तकें छप रही हैं

पता— प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर